श्री सद्‌गुर वे नमः

भक्ति के चोर

कबीर का गाया गायेगा, तीन लोक में मार खायेगा।
कबीर का गाया बूझेगा, अंतरगत को सूझेगा॥

सद्‌गुरु मधु परमहंस जी

भक्ति सागर

–स्वामी मधु परमहंस जी

प्रचार अधिकारी

–राम रतन जम्मू

प्रथम संस्करण – दिसम्बर 2006
प्रतियाँ – 5000

Website Address.
www.sahib-bandgi.org

E-Mail Address.
*Santashram@sahib-bandgi.org
*Sadgurusahib@sahib-bandgi.org

प्रकाशक

साहिब बन्दगी सन्त आश्रम राँजड़ी

पोस्ट राया, तहसील साम्बा

ज़िला–जम्मू

Ph. (01923) 242695, 242602

मुद्रक : सरताज प्रिंटिंग प्रैस, जालन्धर शहर।

विषय सूचि

1. (*i*) संसार से अलग ? 4
(*ii*) नाम अथवा भक्ति को
कबीर साहिब जी ने तीन भागों में बांटा
(*iii*) तीन लोक का राजा निरंजन
अनहद का रचयिता
(*iv*) अमरलोक का विदेह नाम
2. भक्ति भेद 8
3. गुरु और सतगुरू 20
4. नाम बिना पावे नहीं भव सागर को पार 27
5. सतपुरुष को जानसी 34
6. साहिब के कौतुक 38
7. साहिब के चोर 59
8. कहैं कबीर गुरु कृपा बिन 82
9. नारी निंदा ना करो 91
10. रहीम दोहावली 95
11. चश्म दिल से देख तू 106
12. जाका गुरु है आंधरा 116
13. सकल पसारा मेट कर, गुरु में देय समाय 123
14. बीजक के प्यारे शब्द 130
15. मरने वाले का पता 153

संसार से अलग ?

हमारा पंथ भक्ति जगत में वैज्ञानिक तरीके से क्रांति लाया है। सबसे पहले पाँच बाते पूरे संसार को अलग बता रहें है। ✱ ये काल का देश है। यहाँ तीन लोक में काल निरंजन का राज्य है। इसी को वेदों ने निराकार, निरंकार, निरंजन, पार ब्रह्म आदि नामों से पुकारा है। गण, गंधर्व, सिद्ध, साधक, ऋषि मुनि, पीर पैगंम्बर आदि यहाँ तक गये।✱ अमरलोक जाने के लिए (मुक्ति के लिए) कमाई कुछ नहीं करती। यह सारा कार्य सद्‌गुरु कृपा से होता है। ✱ नाम 52 अक्षरों में लिखने, पढ़ने अथवा सुनने वाला नहीं। नाम एक कला है जो पूर्ण सद्‌गुरु के पास है जिससे आत्मा को जागृत किया जाता है और आत्मा मन से अलग हो जाती है। इसे नाम देना कहते हैं। नाम शरीर को नहीं आत्मा को दिया जाता है।✱ इसके आगे महा शून्य है, यहाँ कोई वस्तु नहीं है। इसके नाम **अचिन्त लोक, सोहंग लोक, मूल सुरति लोक, अंकुर लोक, इच्छा लोक, वाणी लोक** और **सहज लोक** है यह समस्त लोक महा शून्य में है। सहज अंश तक जो भी सृष्टि है इसका परम नाश है।

सहज पुरुष तक जेतक भाखा, यह रचना परलै ते राखा॥
आगे अछय लोक है भाई, आदि पुरूष यहां आप रहाई॥

✱ इसके ऊपर अमरधाम परम पुरुष का लोक है। यहाँ कभी भी परलय नहीं है।

जहवां से हंसा आया, अमर है वो लोकवा॥
तहां नहीं परले की छाया, नहीं तहां कछु मोह और माया॥
ज्ञान ध्यान को तहां न लेखा, पाप पुण्य तहंवा नहीं देखा॥
पवन न पानी पुरुष न नारी, हद अनहद तहं नाहिं विचारी॥

यहीं से साहिब आत्माओं के कल्याण के लिए आते हैं।

नाम अथवा भक्ति को कबीर साहिब जी ने तीन भागों में बांटा

सर्गुण भक्ति, निर्गुण भक्ति, परा भक्ति।

''सर्गुण भक्ति करे संसारा, निर्गुण योगेश्वर अनुसारा॥''

आप ने इन दोनों के पार बताया। दादू दयाल जी ने कहा :

कोई सगुण में रीझ रहा, कोई निर्गुण ठहराये।
अटपट चाल कबीर की, मोसे कही न जाय॥

'जाप मरे अजपा मरे, अनहद भी मर जाय।
सुरति समानी शब्द में, उसको काल न खाय॥'

अन्दर धुने है, कुछ इसे **सुरति शब्द अभ्यास** भी कह रहे है और उनमें खो जाते है। कुछ **धुनों को ही प्रमात्मा** कह रहे हैं, पर इससे तुरीया तीत से पार नहीं जा सकते हैं सबका अपना वजूद है धुने खुद खत्म हो जाती हैं। फिर यह कौन सा शब्द हुआ! यानी **धुनात्मक शब्द** भी नहीं है, **वर्णनात्मक शब्द** भी नहीं है। साहिब कह रहे हैं–'सो तो शब्द विदेह।' **आवाज़ रहित धुन** (Sound less Sound) है वो। क्योंकि–**'दो बिन होय न अधर अवाज़ा॥'** **आवाज़ दो के बिना नहीं होती और यहाँ आवाज़ है वहाँ माया है।**

हद टप्पे सो औलियां, बे-हद टप्पे सो पीर।
हद-बे-हद दोनों टप्पे, तिसका नाम कबीर॥

सत्यपुरुष, परम-पिता परमात्मा का पांचवा पुत्र

तीन लोक का राजा निरंजन अनहद का रचयिता

❋ सात शुन्य सातहि कमल, सात सुर्त स्थान।
इक्कीस ब्रह्माण्ड लग, काल निरंजन ज्ञान॥

❋ एक पाट धरती चले, एक चले अस्मानी।
काल निरंजन पीसन लागे, सवा लाख की धानी।

❋ गुप्त भयो हैं संग सबके, मान ही निरंजन जानिए।

❋ अनहद की धुन भवरगुफा में, अति घनघोर मचाया है।
बाजे बजे अनेक भाँति के, सुनि के मन ललचाया है॥
....।
यह सब काल जाल को फन्दा, मन कल्पित ठहराया है॥

❋ तहाँ अनहद की घोर शब्द झनकार है।
लग रहे सिद्धि साधु न पावत पार है॥

❋ मन ही निराकार निरंजन जानिए।

❋ ज्योति निरंजन लग काल पसारा।
मन माया इनसे भई किया सृष्टि विस्तारा॥

❋ बिना जाने जो नर भक्ति करई।
सो नहीं भवसागर से तरई॥

-कबीर साहिब

अमरलोक का विदेह नाम

काया नाम सबहिं गुण गावै, विदेह नाम कोई विरला पावै।
विदेह नाम पावेगा सोई, जिसका सद्गुरू साँचा होई॥

पाँच तीन यह साज पसारा, न्यारा शब्द विदेही हो।
पाँच कहो तो छटवें हम हैं, आठ कहो नौ आई हो॥

पाँच तीन आधीन काया, न्यार शब्द विदेह हो।
सुर्ति मांहि विदेह दरशै, गुरु मता निज एह हो॥

छिन इक ध्यान विदेह समाई।
ताकी महिमा बरनिन न जाई॥

सार नाम सद्गुरु से पावे। नाम डोर गहि लोक सिधाबे॥
सार शब्द विदेह स्वरूपा। निःअक्षर वह रूप अनूपा॥
तत्व प्रकृति भाव सब देहा। सार शब्द निःतत्व विदेंहा॥

बावन अक्षर में संसारा। निःअक्षर सो लोक पसारा॥
सोई नाम है अक्षर बासा। काया ते बाहर परकासा॥

शब्द शब्द सब कोई कहे, वह तो शब्द विदेह।
जिभ्या पर आवे नहीं, निरख परख के लेह॥

–साहिब कबीर जी

पिण्ड ब्रह्मांड और वेद कितेबै पांच तत्त के पारा।
सतलोक यहाँ पुरुष विदेही, वह साहिब करतारा॥

–दादू दयाल जी

भक्ति भेद

एक समय धर्मदास जी साहिब से विनती करते हुए पूछने लगे–

धर्मदास विनवै कर जोरी। सतगुरु सुनिये विनती मोरी।।
भवसागर कौने विधि छूटे। यमबंधन कौने विधि टूटे।।
भव सागर है अगम अपारा। तामहँ अटके सब संसारा।।
सो दरियाव कौने विधि थाहूँ। परम पुरुष को कैसे पाहूँ।।
करौं भक्ति या योग कमाऊँ। देऊँ दान या तीर्थ नहाऊँ।।
जो तुम कहो सो मैं करिहौं। वचन तुम्हार हृदय धरिहौं।।

कहा कि इस संसार सागर से पार कैसे जाऊँ ? यह संसार–सागर तो बड़ा ही गहरा है, जिसमें सारा संसार फँसा हुआ है। ऐसे सागर की थाह कैसे पाऊँ, परम पुरुष की प्राप्ति कैसे करूँ? इसके लिए योग करूँ, दान पुण्य करूँ या तीर्थों में जाकर नहाऊँ ?

साहिब ने कहा–

सुन धर्मन मैं सत्य बताऊँ। जन्म मरण का भरम मिटाऊँ।।
हे धर्मदास भक्ति पद ऊँचा। इन सीढ़ी कोई नहीं पहुँचा।।
योगी योगसाधना करई। भवसागर से नाहीं तरई।।
दान देय सोई फल पावे। भवसागर भुक्तन को आवे।।
तीर्थ नहाये जो कछु होहीं। सो सब भाष सुनाऊँ तोहीं।।
जन्म लेय उज्जवल तन पावे। सम्पति है जग में पुनि आवे।।

कहा कि मैं सत्य बताता हूँ, तुम्हारा जन्म मरण का भ्रम मिटाता हूँ। हे धर्मदास! सत्य भक्ति पद बहुत ऊँचा है, वहाँ तक पहले कोई नहीं पहुँचा। योगी योग साधना करते हैं, पर भवसागर से पार नहीं हो पाते। दान देने से वही फल मिलता है, इसलिए उसे पाने के लिए फिर संसार में आना होता है। तीर्थ नहाने से जो कुछ होता है, वो भी मैं तुम्हें बताता हूँ। उससे सुंदर शरीर मिलता है, धन मिलता है, इसलिए उसे भी पुनः संसार में आना पड़ता है।

हर अवराधन की सुन बाता। कहा भेद सुनिये तुम ज्ञाता।।
हर हर नाम सदा शिव केरा। तासों दूर न होत भव फेरा।।
बहुत प्रीत सों शिव को ध्यावे। रिधि सिद्धि द्रव्य बहु सुख पावे।।
मन जिसके निश्चै कर धरहीं। गिरि कैलास में वासा करहीं।।
फिर के काल झपेटे बाँहीं।। डार देय भवसागर माहीं।।
हरि हरि नाम विष्णु का होई। विष्णु विष्णु भाषै सब कोई।।
बहुत प्रीत सो विष्णुहि ध्यावे। सो जीव विष्णु पुरी को जावे।।
विष्णु पुरी में निर्भय नाहीं। फिर के डार देय भूमाहीं।।
सुनहु धर्मदास तुम हो साधु। इनको कबहुँ मत अवराधू।।
हरि हर ब्रह्मा को है नाऊँ। रज गुण व्यापक है सब ठाऊँ।।
ब्राह्मण को पूजे संसारा। जीव होय नहिं भव ते न्यारा।।
औरन को शिक्षा सब देही। ताते मिलै न परम सनेही।।
पाप पुण्य का लेखा करही। बिना भक्ति चौरासी परही।।

कहा–फिर जो शिवजी की भक्ति करते हैं, वे अनेक प्रकार की रिद्धियाँ, सिद्धियाँ और धन आदि को प्राप्त करते हैं। जिनके मन में विश्वास होता है, मरने के बाद उन्हें कैलाश पर्वत पर वास मिलता है, पर बाद में काल जब झपेटा मारता है, तो फिर भवसागर में फेंक देता है।

ऐसे ही जो विष्णु जी की भक्ति करता है, वो विष्णु पुरी में जाता है, और ब्रह्मा वाले ब्रह्म लोक में जाते हैं पर इन लोकों में निर्भय नहीं, काल के कपट के कारण पुनः मृत्यु लोक में आना पड़ जाता है। ऐसे ही कुछ पाप पुण्य के हिसाब में लगे रहते हैं, और भक्ति से विमुख होने पर संसार में ही स्थान मिलता है।

सगुण के बाद अब साहिब धर्मदास को निगुर्ण भक्ति बताते हुए कहते हैं–

निर्गुण नाम निरंजन भाई। जिन सारी उत्पत्ति बनाई।।
निर्गुण सों उप्जा ओंकारा। तासों तीनों गुण विस्तारा।।

ओंकार मन आप निरंजन। नाना विधि के करे व्यंजन।।
ताके अंश सकल अवतारा। राम कृष्ण तामें सरदारा।।
मन बोधे मन माहीं समावे। निज पद को कोई नाहीं पावे।।
जाय निरंजन माहिं समावे। आगे गम्य न काहू पावे।।
ऐसे तीन लोक सब अटके। खरे सयाने सबही भटके।।
ऋषि मुनि गण गंधर्व अरु देवा। सब मिल करें निरंजन सेवा।।
साधक सिद्ध साधु जो भयेऊ। इनके आगे कोई न गयेऊ।।
वही निरंजन का विस्तारा। तामें उरझे सकल संसारा।।
धर्मदास तुम भक्ति सनेही। इनमें मत अटकावो देही।।

कहा कि अब तुम्हें निर्गुण भक्ति का रहस्य देता हूँ। निर्गुण निरंजन का नाम है। निर्गुण से ही ओंकार की उत्पत्ति है और यही मन है, यही निरंजन है। इसी के सारे अवतार होते हैं। मन की भक्ति से जीव अंतकाल में मन में ही समाता है, पर अपने आत्म रूप को कोई नहीं पाता। जीव निरंजन में समा जाता है, आगे का भेद नहीं पाता। ऐसे ही तीन लोक में सभी अटके हुए हैं, सभी को निरंजन ने भटका रखा है। जितने भी पहले सिद्ध, साधक हुए, सभी निरंजन तक ही गये, आगे कोई नहीं गया। ऋषि, मुनि सब निरंजन की सेवा ही कर रहे हैं। निरंजन की माया का विस्तार बहुत है, उसमें सब उलझ गये हैं। हे धर्मदास! तुम सच्चे भक्त हो, इसलिए तुम इन चीजों में नहीं उलझना।

धर्मदास जी ने कहा कि फिर सच्ची भक्ति क्या है, मुझे समझाकर कहिए।

साहिब ने कहा–

कहैं कबीर सुनो मम वाणी। भक्ति सार मैं कहौं बखानी।।
आगे भक्त भये बहु भाई। करी भक्ति पर युक्ति न पाई।।
आदि भक्ति शिव योगी कीनी राखी गुप्त न जग को दीनी।।
योग करे औ भक्ति कमावै। अधर एक नाम ध्वनि लावै।।
सौ अक्षर है ररंकारा। तासों उपजे सकल पसारा।।

रहे अधर ब्रह्माण्ड के माहीं। शिव जानत को जानत नाहीं।।
आसन मेरी भक्ति नियारी। जाको क्या जाने संसारी।।
ताको योगेश्वर नहिं पावे। और जीव की कौन चलावे।।

कहा कि भक्ति का सार बताता हूँ। अब तक बहुत भक्त संसार में हुए, भक्ति तो की, पर युक्ति नहीं आई। हर चीज की एक युक्ति होती है। महायोगेश्वर शिवजी आदि भक्ति जानते हैं, जिसमें ररंकार नाम का जाप करना होता है, उस ररंकार से ही जगत की उत्पत्ति है। पर इस भक्ति को गुप्त रखा गया। इसे केवल शिवजी ही जानते हैं, कोई और नहीं जानता, पर मेरी भक्ति इससे परे है। जिस भक्ति की बात मैं कर रहा हूँ, उसे योगेश्वर भी नहीं जानते हैं, फिर आम संसारी किस गिनती में हैं।

सनक सनन्दन सनत्कुमारा। सनकादिक से चारों अवतारा।।
ध्यान जु करे निरंजन माहीं। निरंजन सों न्यारा कोउ नाहीं।।
भक्त अनेक भये जग माहीं। निर्भय घर को पावत नाहीं।।
भक्ति करैं तब भक्त कहावे। भगते रहित न कोई पावे।।
भग भुगते फिर फिर भग आवे। भगते बच न कोई पावे।।
चौदह लोक बसैं भग माहीं। भग ते न्यारा कोई नाहीं।।
मेरी भक्ति युक्ति जाना। ताका आवागमन नशाना।।

सनक, सनन्दन, सनत्कुमार, सनकादिक आदि भी निरंजन का ध्यान कर उसी तक पहुँचते हैं, उससे परे कोई नहीं। संसार में अनेक तरह के भक्त हुए हैं, पर उस अमर लोक, जो निर्भय स्थान है, को कोई नहीं पाया। सभी विषयों में फँसे हुए हैं, विषय भोगकर फिर विषयों में ही आकर समाते हैं। इससे कोई नहीं बच पाया। जो मेरी भक्ति पाकर उसकी युक्ति जानता है, उसका आवागमण मिट जाता है, फिर वो मातृ गर्भ में नहीं आता।

जो तुम पूछो भक्ति प्रकारा। ताका भेद सुनो अब न्यारा।।
भक्ति होय न नाचे गाये। भक्ति होय न घंट बजाये।।
भक्ति होय न मूरत पूजा। पाहन सेवे क्या तोहि सूझा।।

विमल विमल गावें अरु रोवें। क्षण एक परम जन्म को खोवें।।
ऐसे साहब मानत नाहीं। ये सब काल रूप के छाहीं।।
मन ही गावे मन ही रोवे। मन ही जागे मन ही सोवे।।
जब लग भीतर लग्न न लागे। तब लग सुरति कबहुँ न जागे।।
सत्य नाम की खबर न पाई। का कर भक्ति करौं रे भाई।।
ठौर ठिकाना जानत नाहीं। झूठे मग्न रहैं मन माहीं।।
कहन सुनन को भक्त कहावें। भक्ति भेद कितहूँ नहिं पावें।।
अपने साहिब को न जाना। बिन देखे का किया बखाना।।
ऐसे भूल परे संसारा। कैसे उतरे भव जल पारा।।

हे धर्मदास! जो तुम सच्ची भक्ति पूछ रहे हो तो पहले यह समझ लो कि नाचना गाना , घंट बजाना , मूर्ति पूजा आदि यह सब भक्ति में नहीं आते। फिर रोना, गाना आदि भी भक्ति नहीं है। इन चीजों से साहिब खुश नहीं होते हैं। ये सब तो काल का जाल है, क्योंकि मन ही रोता है, मन ही गाता है, मन ही जागता है, मन ही सोता है। इसलिए जब तक भीतर लग्न नहीं लगती, तब तक इन बाहरी चीजों से सुरति चेतन नहीं हो सकती। जब तक सत्यनाम नहीं मिल जाता, तब तक कौन-सी भक्ति हुई! सच्चे साहिब के घर का तो पता नहीं है, फिर झूठे ही मन में खुश होते रहने से क्या होता है! ऐसे तो कहने सुनने को बहुत सारे भक्त बन जाते हैं, पर सच्ची भक्ति का भेद मालूम नहीं होता। बिना देखे ही उसका बखान करते रहने से कुछ नहीं होता। सारा संसार ऐसे ही बाहरी चीजों में उलझा हुआ है, फिर संसार सागर से पार कैसे पाया जा सकता है!

धर्मदास तुम हो बुद्धिवंता। भक्ति करो पावो सतसंता।।
एक पुरुष है अगम अपारा। ताको नहीं जाने संसारा।
ताकी भक्ति से उतरे पारा। फिर के नहिं ले जग अवतारा।।
भक्ति ही भक्ति भेद बहु भारी। यही भक्ति जगत ते न्यारी।।

हे धर्मदास! तुम बुद्धिमान हो, इसलिए संतों के संग में जाकर

सत्य भक्ति को प्राप्त करो। एक पुरुष अगम है, उसको संसार नहीं जानता है। उसकी भक्ति से ही जीव संसार सागर से पार होकर फिर वापिस नहीं आता। यही सच्ची भक्ति का गुप्त भेद है, जो संसार में प्रचलित सब भक्तियों से न्यारी है।

धर्मदास जी ने पूछा–

धर्मदास कहै सुनो गुसाईं। पूरण पुरुष बसै किहि ठाईं।।
केहि विधि सों सेवा कीजे। कैसे चरण कमल चित दीजे।।

पूछा कि वो परम पुरुष कहाँ रहता है, कैसे उसकी भक्ति करूँ?

साहिब ने कहा–

पहिले प्रेम अंग मैं आवे। साधु देख सम्मुख होय धावे।।
चरण धोय चरणामृत लेवे। प्रीति सहित साधु को सेवे।।
जोई साधु प्रेम गति जाने। ता साधु की सेवा ठाने।।
परम पुरुष की भक्ति दृढ़ावे। सुरतै नृप कर तहँ पहुँचावे।।
तासों भक्ति करो चितलाई। छाड़ो दुर्मति औ चतुराई।।
तबही परम पुरुष को पाये। भव तरके जग बहुरि न आवे।।

कहा कि पहले अंतर में साधु के प्रति प्रेम उत्पन्न करे, उनके चरण धोकर चरणामृत ले, उनकी सेवा करें। जो साधु सच्चे प्रेम की बात जानता हो, उसकी सेवा करो, वो ही परम पुरुष की भक्ति में लगाकर वहाँ पहुँचा सकता है। उसी की भक्ति करो, तब ही परम पुरुष को पाकर संसार से पार हो सकते हो।

धर्मदास जी ने पूछा–

सगुण भक्ति करे संसारा। निर्गुण योगेश्वर आधारा।।
इन दोनों के पार बतावा। तुम कैसी विधि तहँ मन लावा।।
सत्य बात मोहि कहो गुसाईं। केहि विधि सुरति लगाऊँ धाई।।
सतगुरु संशय देहु निवारी। मैं जाऊँ तुम्हरी बलिहारी।।

सगुण निर्गुण भेद बताऊँ। तीसर न्यार मोहिं लखाऊँ।।
तुम सत सत्य तुम्हारी बाता। मैं याचक तुम समरथ दाता।।

कहा, हे साहिब! आम संसारी जीव सगुण भक्ति करता है, योगेश्वर तक निर्गुण भक्ति करते हैं, पर आप इन दोनों के पार बता रहे हैं, मुझे समझ नहीं आ रहा है, कि वहाँ कैसे ध्यान लगाऊँ, कैसे वहाँ की भक्ति करूँ। मुझे सगुण और निर्गुण का भेद बताकर तीसरी न्यारी भक्ति बताओ। मैं जानता हूँ कि आप सत्य हैं और आपकी सब बातें भी सत्य ही हैं।

साहिब ने कहा–

सुन धर्मन समरथ है न्यारा। ताको नहीं जाने संसारा।।
योगेश्वर वह गति नहिं पाई। सिद्ध साधक की कौन चलाई।।
भक्ति होय जगत में भारी। ध्रुव प्रह्लाद सदा अधिकारी।।
सतयुग भक्ति करी ध्रुव राजा। पाँच वर्ष आयू तत भ्राजा।।
निकसे गृह ते बाहर गयेऊ। नारद के उपदेशी भयेऊ।।
छठें मास प्रकटे हरि आई। राज दिये वैकुण्ठ पठाई।।
साठ हजार वर्ष दियो राजू। कुटुम सहित वैकुण्ठ विराजू।।
एक दिवस जब प्रलय आई। तहाँ ते पुनि ये देह गिराई।।
ऐसे भक्त भये जग माहीं। परम पुरुष गत पावत नाहीं।।

कहा कि जो परम पुरुष है, वो सबसे न्यारा है, उसे कोई नहीं जानता। योगेश्वर भी वो गति नहीं पा सकते, फिर सिद्ध, साधक आदि किस गिनती में हैं! संसार में भक्ति करने वाले बहुत हुए, पर परम पुरुष का भेद किसी ने नहीं पाया, इसलिए संसार के आवागमन का चक्कर नहीं छूटा।

धर्मदास जी ने पूछा–

धर्मदास बूझे चित लाई। सतगुरु संशय देहु मिटाई।।
सर्गुण भक्त मुक्त नहिं होई। है वह एकहि या है दोई।।
की सर्गुण को निर्गुण कहिये। भिन्न भिन्न भेद मोहिं कहिये।।

यह संसार कहाँ से आया। को है ब्रह्म अरु को है माया।।
भक्ति भेद कहो मोहे स्वामी। तुम सब घट के अंतर्यामी।।
जीव काज आये जगमाहीं। अब मोको कछु संशय नाहीं।।

कहा कि क्या सगुण भक्त मुक्त नहीं होता! वो सगुण कोई दूसरा है या वही एक परमात्मा है। कृप्या मुझे सगुण निर्गुण का भेद अलग अलग करके बताओ। यह संसार कहाँ से आया है, ब्रह्म कौन है और माया क्या है! मुझे भक्ति का सारा भेद समझाकर कहो, क्योंकि मैं जानता हूँ कि आप जीवों का कल्याण करने के लिए ही संसार में आए हैं।

साहिब ने कहा–

कहैं कबीर सुनो धर्मदासा। अब निज भेद कहो परकाशा।।
आदि न अंत हती न माया। उत्पति प्रलय हती न काया।।
आदि ब्रह्म नहीं ओंकारा। नहीं निरंजन नहिं अवतारा।।
दश अवतार न चौवीस रूपा। तब नहिं होता ज्योति स्वरूपा।।
नहिं तब शून्य सुमेर न भारा। कूर्म न शेष धरे अवतारा।।
अक्षर एक न ररंकारा। त्रिगुण रूप है नहिं विस्तारा।।
शक्ति युक्ति न आदि भवानी। एक होय नहिं ज्ञान अज्ञानी।।
नहीं है बीज नहीं अंकूरा। आदि अमी नहीं चंद न सूरा।।

कहा कि मैं अपना भेद सुनाता हूँ, समझना। मैं तबसे हूँ जब आदि अंत कुछ भी नहीं था, माया नहीं थी। उत्पति नहीं थी, प्रलय नहीं थी, काया नहीं थी। ओंकार नहीं था, निरंजन नहीं था, उसके दस अवतार नहीं थे, आदि भवानी नहीं थीं, सूर्य-चाँद नहीं थे।

परम पुरुष का भेद देते हुए साहिब आगे धर्मदास को समझाते हैं–

पुरुष कहो तो पुरुषहि नाहीं। पुरुष हुवा आपा भू माहीं।।
शब्द कहो तो शब्दहि नाहीं। शब्द होय माया के छाहीं।।
दो बिन होय न अधर अवाजा। कहो कहा यह काज अकाजा।।

अमृत सागर वार न पारा। नहिं जानों केतिक विस्तारा।।
तामें अधर भवन इक जागा। अक्षय नाम अक्षर इक लागा।।
नाम कहो तो नाम न जाका। नाम धरा जो काल तिहि ताका।।
है अनाम अक्षर के माहीं। निह अक्षर कोई जानत नाहीं।।
धर्मदास तहँ बास हमारा। काल अकाल न पावे पारा।।
ताकी भक्ति करै जो कोई। भव ते छूटै जन्म न होई।।

कहा कि यदि उस सत्ता को पुरुष कहा जाए तो वो पुरुष नहीं है, क्योंकि पुरुष तो स्वयं प्रकृति से हुआ है। फिर यदि उसे शब्द कहा जाए तो वो शब्द भी नहीं है, क्योंकि शब्द भी माया से ही उत्पन्न होता है। दो चीजें आपस में टकराती हैं, तभी शब्द उत्पन्न होता है। आवाज़ दो के बिना नहीं होती, इसलिए जहाँ द्वैत आ गया, वहाँ माया है। पर उस अमृत सागर का कोई पार नहीं है। वो एक अक्षय लोक है, अक्षय नाम है, कभी मिटता नहीं है। पर यदि उसका कोई नाम कहा जाए तो उसका कोई नाम भी नहीं है, क्योंकि नाम अक्षर की सीमा में होने से काल का है। वो अनाम है, वो निःअक्षर है, उसे कोई नहीं जानता है। हे धर्मदास! वहीं मेरा वास है, वहाँ काल भी नहीं पहुँच सकता है। उसकी जो कोई भक्ति करता है, उसका फिर कभी जन्म नहीं होता।

धर्मदास जी ने पूछा–

हे स्वामी यह अकथ कहानी। आगे सुनी न काहू जानी।।
योगेश्वर नाहीं पावें पारा। मैं क्या जानों जीव विचारा।।
अचरज गुप्त तुम आय सुनाई। ताकी गम्य न काहू पाई।।
ताकी भक्ति करैं किहि भांति। रूप अरूप न पूजा पाती।।
अब मोसें कछु होवत नाहीं। सुरत समाय गयी तुम माहीं।।
यहाँ वहाँ तुम समरथ दाता। मोकहँ जान परी यह बाता।।
सत्य कबीर नाम मैं जाना। सो भव को क्यों कियो पयाना।।
ऐसे संत जन्म क्यों धारा। किहि कारण लीन्हा अवतारा।।

सत्य कहो बंधन में नाहीं। निरबंधन कैसे जग माहीं।।
देही धरी सबहि दुख पाया। तुमही काहू न व्यापी माया।।
दृढ़ हों पूछत हों गुरु बाता। रिस न करहु तुम समरथ दाता।।

कहा कि आपने जो कुछ कहा, वो मैं पहले कभी न सुनी न जानी। योगेश्वर भी वे बातें नहीं जानते हैं, फिर मैं क्या चीज हूँ! आपने मुझे गुप्त भक्ति का रहस्य दिया, पर उसकी भक्ति मैं कैसे करूँ, जिसका कोई रंग-रूप ही नहीं है। फिर अब तो मेरा ध्यान आपमें ही समाया हुआ है, अब मुझसे अन्य कुछ नहीं हो सकता। मैं समझ चुका हूँ कि इस लोक में और उस लोक में आप ही हैं। मैं समझ चुका हूँ कि आप सत्य हैं, पर आप संसार में क्यों आए? किस कारण आपने अवतार धारण किया? सत्य तो संसार के बंधन में नहीं आता, फिर आप निरबंधन होकर भी संसार में कैसे रहते हैं? जो भी देह धारण करता है, वो दुख ही पाता है, पर आपको जग की माया क्यों नहीं लगी? हे सद्गुरु! मैं आपसे यह सब पूछता हूँ, आप नाराज़ नहीं होना।

साहिब ने कहा-

धर्मन मोहिं न व्यापे माया। कहन सुनन की है यह काया।।
देह नहीं अरु दरशै देही। रहो सदा जहाँ पुरुष विदेही।।
यह गत मोर न जानै कोई। धर्मदास तुम राखो गोई।।
आदि पुरुष निहअक्षर जाना। देही धर मैं प्रकटे आना।।
गुप्त रहे नाहीं लख पावा। सो मैं जग में आन चितावा।।
जुगुन जुगन लीन्हा अवतारा। रहों निरंतर प्रकट पसारा।।
सतयुग सतसुकृत कह टेरा। त्रेता नाम मुनीन्द्र मेरा।।
द्वापर करुणामय कहाये। कलियुग नाम कबीर रखाये।।
चारों युग के चारों नाऊँ। माया रहित रहै तिहि ठाऊँ।।
सो जागह पहुँचे नहिं कोई। सुर नर नाग रहै मुख गोई।।
सबसे कहों पुकार पुकारी। कोई न माने नर अरु नारी।।

उनका दोष कछु न भाई। धर्मराय राखे अटकाई।।
शिव गोरख सोइ पार न पावें। और जीव की कौन चलावें।।
नवहिं नाथ चौरासी सिद्धा। समझ बिना जग में रहे अंधा।।
ऋषि मुनि और असंखन भेषा। सत्य ठौर सपने नहीं देखा।।
कोई योग कोई मद के माता। कोई कहै हम लखे विधाता।।
सत्य पुरुष की युक्ति न पाई। हृदय धरै नहिं सत्य को भाई।।
कोई कहै हम पढ़े पुराना। तत्व अतत्व सबै कछु जाना।।
कोई कहै तप वश कर राखा। तप है मूल और सब शाखा।।
कोई कहै कर्म अधिकारा। कर्महिं सो उतरे भव पारा।।
कोई कहै भाग्य लिखा सो होई। भाग्य लिखा मेटै नहिं कोई।।
कहँ लग कहौं यही सब कहई। भेद हमार न कोई लहई।।
सब सों हार मान मैं बैठा। ये सब जीव काल घर पैठा।।

कहा कि मुझे माया नहीं लगती है, यह काया तो तुम्हारे देखने के लिए है, केवल कहने को काया है, पर वास्तव में मेरा कोई शरीर नहीं है, केवल दिखाई दे रहा है। मैं तो सदा वहाँ रहता हूँ, जहाँ परम पुरुष का वास है। मेरा यह भेद कोई नहीं जानता है, तुम भी इसे गुप्त ही रखना। आदि पुरुष निःअक्षर है, गुप्त है, उसे कोई नहीं जानता है, इसलिए मैं देही धारण कर जीवों को चिताने आता हूँ, उसका संदेश देता हूँ। मैं हर युग में आता हूँ। सतयुग में मेरा नाम सतसुकृत था, त्रेता में मैं मुनीन्द्र के नाम से जाना जाता हूँ, द्वापर में मेरा नाम करुणामय होता है और कलयुग में मैं कबीर नाम से प्रगट हूँ। ये मेरे चारों युग के नाम हैं, पर मैं माया से सर्वथा रहित रहता हूँ। मैं जहाँ की बात करता हूँ, वहाँ कोई नहीं पहुँच पाता है। मैं सबको पुकार पुकार कर वहाँ का संदेश देता हूँ, पर कोई भी मेरी बात नहीं मानता है। उनका कोई दोष नहीं है, क्योंकि वास्तव में निरंजन ने सबकी मति को भ्रम में डाल रखा है। ऋषि-मुनियों ने वो स्थान सपने में भी नहीं देखा होता है। इसलिए मेरी बात मानने को कोई तैयार नहीं होता है। कोई कहता है कि हमने योग द्वारा परमात्मा को देखा

है, कोई कहता है कि हमने पुराणों को पढ़ा है, कोई कहता है कि तप से हमने इन्द्रियों को वश में किया हुआ है, तप ही मूल है, बाकी सब शाखाएँ हैं। कोई कहता है कि कर्म ही प्रधान है, कर्म से ही भवसागर के पार हुआ जा सकता है। कोई कहता है कि जो भाग्य में लिखा होगा, वही होगा। ऐसे में मेरा भेद कोई नहीं पाता, सब अपनी अपनी बात को स्थापित करने में लगे रहते हैं। मैं जान जाता हूँ कि इनके सिर ऊपर काल विराजमान है, जो यह मेरी बात नहीं समझ रहे हैं, इसलिए मैं सबसे हार मानकर चुप हो जाता हूँ।

साहिब कहते हैं–

उतपति परलय सिरजन हारा। मेरा भेद निरंजन से पारा।।
तासे जगत न काहू माना। तातें तोहि कहों मैं ज्ञाना।।
जो कोई मानै कहा हमारा। सो हंसा निज होय हमारा।।
अमर करों फिर मरन न होई। ताका खूँट न पकड़ै कोई।।
फिर के नाहीं जन्में जगमाहीं। काल अकाल ताहि दुख नाहीं।।
अंकुरी जीव जु होय हमारा। भवसागर तें होय नियारा।।

कहा कि उतपत्ति, प्रलय आदि निरंजन का काम है, मेरा भेद निरंजन से आगे है। उसे कोई नहीं जानता है। जो कोई मेरी बात मान लेता है, वो फिर मेरा हो जाता है, मैं फिर उसे अमर कर देता हूँ, उसका दुबारा मरण नहीं होता। कोई अंकुरी जीव ही हमारा हो पाता है।

गुरु और सतगुरु

प्रथम वन्दों सतिगुरुचरण जिन, अगम गम्य लखाइया।
गुरुज्ञान दीप प्रकाश करि, पट खोल दरश दिखाइया।
जिहि कारणे सिद्या पचे, सो गुरु कृपा से पाइया।
अकह मूर्ति अमिय सूरति, ताहि जाय समाइया।।

अनुरागसागर के प्रारंभ में सर्वप्रथम इतना बड़ा महात्म गुरु का कह दिया। आख़िर संतत्व की धारा में जो इतना महात्म कहा, उसमें वज़न है। गुरु का महात्म तो सगुण में भी है, पर इतना नहीं; केवल खानापुरी है, क्योंकि उसमें कहा गया कि गुरु ज़रूरी है; गुरु बिना गति नहीं। इसलिए हरएक औपचारिकता के तौर पर गुरु कर रहा है। पर संतत्व की धारा में भक्ति की जड़ ही गुरु है।

गुरु बिन माला फेरते, गुरु बिन देते दान।
गुरु बिन दान हराम है, पूछो वेद पुरान।।
गर्भ योगेश्वर गुरु बिना, लागा हरि की सेव।
कहै कबीर वैकुण्ठ ते, फेर दिया शुकदेव।।

गर्भ से ही योगेश्वर बंदे को बैकुण्ठ में भी निवास नहीं मिल पाया, विष्णु जी ने वापिस किया, कहा–गुरु बिन आदमी मुझे नहीं भाता, पहले गुरु करो। जितने भी महापुरुष हुए, सबने गुरु किया, सबने गुरु की महिमा कही।

राम कृष्ण से कौ बड़ा, तिन भी तो गुरु कीन।
तीन लोक के वे धनी, गुरु आगे आधीन।।

त्रिदेव आदि भी गुरु की शरण गये। इस तरह गुरु की इतनी महिमा कही।

हरि सेवा युग चार है , गुरु सेवा पल एक।
तिसका पटतर ना तुला, संतन किया विवेक॥
सहजो ऐसा धाम नहीं, सकल अण्ड ब्रह्मण्ड।
सकल तीरथ गुरु चरण, तो भी सदा अखण्ड।।

अगर सगुण में देखें तो इतनी महिमा नहीं मिलेगी। कथा पुराणों में सुनने को मिलता है कि भीष्म और परशुराम का युद्ध होता था, द्रोण और अर्जुन का युद्ध हुआ, गोरखनाथ और मछेन्द्रनाथ का संघर्ष चला। पर संतत्व की धारा में जगह नहीं है। वहाँ तो कह रहे हैं–

गुरु आज्ञा लै आवही, गुरु आज्ञा लै जाहिं।
कहैं कबीर ता दास को, तीन लोक डर नाहिं।।
'गुरु का कथन मान सब लीजै। सत्य असत्य विचार न कीजै।।'

गुरुवाद कोई तानाशाही है क्या! नहीं! क्या कारण है फिर! इस पर आगे बात करेंगे। सगुण में इतनी महिमा क्यों नहीं! क्योंकि अधिकतर गुरु गृहस्थ हैं। दिशा क्या है–तीर्थ, व्रत करना, यज्ञ करना, शुभ कर्म करना आदि। इसकी निंदा नहीं की संतों ने। बालक को पहले नर्सरी में क्यों भेजते हैं! ताकि पहले तमीज सीखे। नर्सरी एक तमीज है। अगर वो कहे कि आगे नहीं बढ़ना है तो गफलत में है। सगुण में गुरु मंत्र भी देता है, पर पिण्डा छुड़ा लेता है, पल्ला झाड़ लेता है। वो सीधा कहता है कि पुण्य करोगे तो स्वर्ग जाओगे। शिष्य जानता है कि कर्म द्वारा ही पार होना है, खुद ही करना है। इसलिए वो भी कर्म को महत्व दे रहा है, गुरु को अधिक महत्व नहीं दे रहा। साल में एक–दो बार मुलाकात हुई, ठीक है। पर संतत्व की धारा में ऐसा नहीं, उसमें साहिब कह रहे हैं–**'गुरु का दर्शन कीजै, दिन में कई–कई बार.....।'**

साहिब ने पक्षपात रहित वाणी बोली। सगुण–निर्गुण में ज़्यादा महत्व नहीं; वे पाप भी कर रहे हैं, कोई बात नहीं; गुरु टोकता भी नहीं। दूसरी है, निर्गुण भक्ति। इसमें योग का महात्म है। इसमें भी गुरु का

ज़्यादा महत्व नहीं। इसके पाँच आयाम हैं। गुरु योग करने को कहता है। वो भी दसवें द्वार तक का रहस्य देकर पल्ला झाड़ लेता है। जा! यही तरीका है, ध्यान कर और अंदर की ताकतें जगा। साधक के दिल में यह रहता है कि मैंने अपनी ताकत से पार होना है। साहिब कह रहे हैं– **'योगी योग साधना करई, भवसागर से नाहिं तरई।'** उसे पता है, जो कुछ उसके पास है, उसकी अपनी कमाई है, इसलिए उसे अहंकार भी रहता है।

भक्ति-2 तो सारा संसार कह रहा है, पर कोई भी इसके रहस्य को नहीं जान पा रहा है। जैसे पढ़ाई में अलग-2 विषय हैं–आर्ट्स, कॉमर्स, साईंस आदि। इस तरह निर्गुण भक्ति के पाँच विषय हैं। यही किया योगियों ने। उन्होंने पंच मुद्राओं का ध्यान किया और अनेक सिद्धियाँ प्राप्त की। पर साहिब ने कहा–

सिद्ध साध त्रिदेवादि ले, पाँच शब्द में अटके।
मुद्रा साध रहे घट भीतर, फिर औंधे मुँह लटके।।

यहीं तक अटके, आगे नहीं जा पाए। देखा ना, अपनी कमाई से एक स्थान पर आकर सब अटक गये, कोई आगे नहीं जा सका। शरीर के विभिन्न स्थानों पर ध्यान लगाकर मानसिक शक्तियों को जगाते रहे, पर फिर-2 माँ के पेट में आना पड़ा यानी अपनी कमाई से जन्म मरण का चक्कर समाप्त नहीं होगा। इसलिए साहिब ने कहा–

इसके आगे भेद हमारा। जानेगा कोई जाननहारा।।
कहैं कबीर जानेगा सोई। जा पर कृपा सतगुरु की होई।।

अब यहाँ सद्गुरु शब्द आया। कॉलेज में पढ़ाने वाला लेक्चरर् है, पर हाई स्कूल में पढ़ाने वाला मास्टर है। इस तरह तीन लोक का भेद देने वाला गुरु है और वो भी केवल रास्ता बताने वाला, खुद ले जाने में असमर्थ।

एक साधारण डॉ० जो होता है, उसे थोड़ा-2 सब चीज़ों का ज्ञान

होता है। कान दर्द हो, देख लेगा, दवा भी दे देगा; नाक दर्द हो, तो भी देख लेगा, ठीक भी कर देगा; सिर दर्द हो, पेट दर्द हो, सब देख लेगा; पर यदि दर्द गहरा हो तो सीधा कहेगा कि मेरे बस की बात नहीं है, किसी स्पेशलिस्ट को दिखाओ। तो सद्गुरु स्पेशलिस्ट है। जन्म-मरण का जो रोग है, बड़ा गहरा है। कई युगों से आत्मा यहाँ भटक रही है। इसे बाँधने वाली शक्तियाँ भी बड़ी ज़बरदस्त हैं। बहुत बंधनों से बंधा है यह जीव। तो साधारण गुरु के बस की बात नहीं है। वो जो रास्ता बताता है, यदि कोई उसपर चला भी, साधना की भी तो सालोक्य, सामीप्य, सायुज्य, सारोप्य-इन चार मुक्तियों में किसी एक की प्राप्ति ही करता है यानी सदा के लिए नहीं छूट पाता है, क्योंकि ये मुक्तियाँ सीमित समय की हैं। शास्त्रों में भी यह बात स्वीकार की गयी है। **'कर्माणिक्षीणे मृत्युलोका।'** मान लो, लाखों में कोई एक ब्रह्म लोक, निराकार लोक तक पहुँच भी गया, तो भी एक तो रहा भी तीन लोक के अंदर, दूसरा वापिस आना पड़ेगा। इस तरह यह रोग साधारण गुरु के करने से सदा के लिए तो समाप्त हुआ नहीं। **'कोई-2 पहुँचा ब्रह्म लोक में, धर माया ले आई।'** जैसे अंग्रजी दवा जड़ से रोग को ख़त्म नहीं कर सकती, उसी तरह साधारण गुरु के बताए मार्ग पर अगर चला भी जाए, तो सदा के लिए छुटकारा नहीं मिलेगा।

सद्गुरु की खोज करनी होगी। वो कोई रास्ता थोड़ा बताता है; वो उठाकर वहाँ पहुँचा देता है। फिर वो कोई ब्रह्म लोक या निराकार तक थोड़ा पहुँचाता है; वो तीन लोक से परे ऐसे स्थान पर पहुँचा देता है, जहाँ से फिर वापिस नहीं आना होता। **'तहके गये बहुरि ना आवे.....।'** इसलिए सद्गुरु ही जन्म मरण के इस रोग को मिटा सकता है।

सतगुरु के उपदेश का, सुनिया एक विचार।
जो सतगुरु मिलता नहीं, जाता जम के द्वार।
यम द्वारे में दूत सब, करते ऐंचातानि।

उनते कभू न छूटता, फिरता चारों खानि।
चारि खानि में भरमता, कबहुँ ना लगता पार।
सो फेरा सब मिटि गया, सतगुरु के उपकार।।

सगुण-निर्गुण में गुरु का ज़्यादा महात्म नहीं है। भूचरी मुद्रा बता दी गुरु जी ने, चाचरी मुद्रा बता दी शिष्य को। शिष्य जानता है कि रास्ता बताया, अब आगे की साधना का काम मेरा है, इसलिए अधिक महत्व नहीं दिया..... दर्जा कम दिया। पर संतत्व की धारा में परमात्मा से बड़ा कह दिया। ख़ामख़ाह नहीं कहा; इसमें रहस्य है।

माता-पिता का दर्जा बड़ा है, पर माता का ज़्यादा है, इसलिए माता-पिता कहा। पिता-माता कोई नहीं कहता। बड़े का नाम ही पहले लिया जाता है। राम-लक्ष्मण कहते हैं। अगर लक्ष्मण -राम कहें तो ठीक नहीं है। ...तो माँ बड़ी है; उसका दर्जा ऊँचा है, पर इसका यह मतलब नहीं कि पिता का कोई महत्व नहीं। पिता के बिना भी काम नहीं चलने वाला। शरीर में 90 प्रतिशत अंश माँ का है, 10 प्रतिशत पिता का। हड्डियाँ पिता के वीर्य से बनीं। बाकी माँस, रोम, नाखून आदि मां का रज है। जब हड्डियाँ नहीं होती तो रज कहाँ स्थित होता! मुर्गी के अण्डे के अंदर जो बाहरी सफ़ेद आप देखते हैं, वो माँ का रज है और पीला-2 भाग पिता का वीर्य है। इसलिए दोनों का महत्व है। अगर कोई कहे, सगुण ब्रह्म दिखाओ तो माता-पिता को खड़ा कर देना। .... तो माता-पिता कहा गया, क्योंकि 10 माह पेट में रखा, जन्म दिया; फिर देखभाल भी उसी ने ज़्यादा की। माँ खुद भूखी रह सकती है, पर अपने बच्चे को भूखा नहीं देख सकती..... कष्ट होता है उसे।

जब माँ बालक को जन्म देती है तो बहुत नूर उसका ख़त्म हो जाता है; वो बालक बहुत कुछ खींचता है। इसलिए किसी ने बड़ा प्यारा कहा है-

जननी जने तो दुइ जन, इक दाता इक सूर।
ना तो जननी बाँझ रह, काहे गँवाये नूर।।

कहा–ख़ामख़ाह नूर क्यों ख़त्म कर रही है; या तो भक्त पैदा कर या वीर। यह माँ के हाथ में होता है कि बालक कैसा हो। यदि गर्भ के समय भक्ति करेगी तो भक्त पैदा होगा, अगर वीरों की कहानियाँ सुनेगी तो वीर पैदा होगा। माँ के हाथ में है। देखा ना, माँ का कितना योगदान है। जैसे माँ को बाप से बहुत बड़ा कहा, ऐसे ही गुरु को बहुत बड़ा कहा।

गुरु हैं बड़े गोविंद से, मन में देख विचार।
हरि सुमिरे सो वार है, गुरु सुमिरे सो पार।।
सात दीप नव खण्ड में, गुरु से बड़ा ना कोय।
कर्त्ता करे न करि सकै, गुरु करे सो होय।।
कबीरा हरि के रूठते, गुरु की शरणै जाय।
कहैं कबीर गुरु रूठते, हरि नहीं होत सहाय।।

साहिब ने बराबर नहीं कहा। कहा–कहीं नहीं लगते परमात्मा गुरु के आगे। बड़ी सटीक बात की, तीर-तुक्के वाली बात नहीं की। इतना महात्म सगुण-निर्गुण भक्ति में नहीं मिलेगा। भीष्म का परशुराम के साथ युद्ध क्यों हुआ? परशु ने सोचा, इसमें मुझसे ज़्यादा शक्ति आ गयी है। पर संतत्व की धारा में ऐसा संभव नहीं। यहाँ तो कह रहे हैं–

गुरु गूगे गुरु बाँवरे, गुरु के रहिये दास।
जे गुरु भेजें नरक में, तो राखो स्वर्ग की आस।।

सुंदरदास जी कह रहे हैं, गुरु सच में गोविंद से बड़ा है। देखो, कितना प्यारा तर्क दे रहे हैं–

गोविंद के किये जीव जात हैं रसातल कौं,
गुरु उपदेसे सुतौ छूटैं जम फंद तें।
गोविंद के किये जीव सब परें कर्मनि कै,
गुरु के निवाजे सो फिरत हैं स्वछंद तें।

गोविंद के किये जीव बूड़त भवसागर में,
सुंदर कहत गुरु काढ़ें दुख द्वंद तें।
और ऊ कहाँ लौं कछू मुखतें कहौं बनाइ,
गुरु की महिमा अधिक है गोविंद तें।।

संतों ने गुरु पद को बड़ी ऊँचाई तक पहुँचाया। **'गुरु का कथन मान सब लीजै। सत्य असत्य विचार न कीजै।'** कितनी बड़ी बात कह रहे हैं, कह रहे हैं कि विचार भी नहीं करना, उनकी आज्ञा में रहना। पर यह कोई साधारण गुरु के लिए नहीं कह रहे, सगुण-निर्गुण वाले गुरु के लिए नहीं बोल रहे, यह याद रहे। फिर सद्गुरु देता क्या है! गुरु सक्षम आध्यात्मिक शक्ति का पुंज है; वो एक पल में उस शक्ति को आपमें उडेल देगा। **'कोटिन तीरथ भ्रम-2 आवे। सो फल गुरु के चरणन पावे।।'** इसलिए इतनी महिमा कही गयी। यह पावर कहाँ से आयी! जो अनादि अनंत में मिल जाता है, उसकी आत्मा में एक पावर आती है; उसी पावर से वो आपको भी बदल देगा। आपने सोचा, रुहानियत का मतलब है, जो चाहें, मिल जाए; इच्छा की, फलाने की टाँग टूट जाए। ये सिद्धियाँ हैं। **'अष्ट सिद्धि नव निधि को, साधु मारत लात।'** संतों के पास परम सिद्धि है; जब वो आपमें अध्यात्म शक्ति उडेल देगा तो पता है क्या होगा-**'कीट ना जाने भृंग को, गुरु करले आप समान।'** वो अपने समान कर लेगा।

नाम बिना पावे नहीं भवसागर को पार

भौसागर है अगम अपारा। तामें बूड़ गयो संसारा।।
पार लगन को सब कोई चाहे। बिन सतगुरु कोई पार न पावे।।
यह जग जीव थाह न पावै। बिना नाम सब गोता खावै।।
कहैं कबीर नाम गह जोई। भरम छोड़ भव पारहिं होई।।

साहिब कह रहे हैं कि यह संसार सागर अथाह है, जिसमें सब जीव डूब रहे हैं। पार तो सभी होना चाहते हैं, पर सद्गुरु के बिना कोई पार नहीं हो सकता, इस संसार सागर की कोई थाह नहीं पा रहा है, बिना नाम के सब गोते खा रहे हैं, भटक रहे हैं। साहिब कहते हैं कि जो नाम को पकड़ लेता है, वो सब भ्रमों को त्याग कर इस संसार-सागर के पार हो जाता है।

कहैं कबीर सुनो धर्मदासा। जग जीवों की कथा प्रकाशा।।
आदि नाम हम भाख सुनाया। मूरख जीव मरम न पाया।।
राम वरन जग कीन्हा भाई। तुम सुनियो मैं देऊँ बताई।।
जगत कहै जुलाहा अज्ञानी। हरि हर का कछु भेद न जानी।।
नीच जाति अरु भक्त कहाई। हरि के दरस कबहुँ न पाई।।
वेद पुराण गीता हम जाना। हमसे नाहक करे बखाना।।
हमरो वेद कहे निज बाता। रामचंद्र समरथ हैं दाता।।
चार वेद ब्रह्मा ने ठाना। जुलहा भूल गया अभिमाना।।
ब्रह्मा विष्णु अरु शिव देवा। ऋषि मुनि करें मिल सेवा।।
वेद शास्त्र में हमने जाना। ब्रह्मा विष्णु महेश्वर माना।।
ले अवतार जीव जग आये। जुलहा उलटा ज्ञान चलाये।।
ऐसा ज्ञान हमारा होई। जुलहा कहा न मानो कोई।।

कहा कि मैंने जीवों को आदि नाम का भेद सुनाया, पर कोई भी उसका भेद न पा सका, सब राम नाम में लगे हुए थे, कहने लगे कि जुलाहा अज्ञानी है, ईश्वर का भेद नहीं जानता है। नीच जाति का है, इसने कभी ईश्वर के दर्शन नहीं पाए हैं। हम तो वेद, पुराण आदि जानते हैं, हमसे बेकार की बातें कर रहा है। वेद, शास्त्रों से हमने जाना है कि त्रिदेव ही सबसे बड़े देवता हैं। यह जुलाहा इस बात को भूल गया है, इसलिए उलटी बातें कर रहा है, इसकी बात कोई नहीं मानो।

कहैं कबीर सुनो धर्मदासा। आदि नाम मैं कहों सब पासा।।
आदि नाम मैं भाख सुनाई। यह जग जीव न चेता भाई।।
आदि नाम की सुधि विसराये। माया में सब जग लपटाये।।
सच्चे साहिब को न पाये। राम कृष्ण जग ध्यान लगाये।।
ऐसे भूल गये संसारा। कैसे उतरें भव जल पारा।।
साहिब पै जग धरै न ध्याना। तिहुँ पुर काल ठगो हम जाना।।
सब कोई नाम गहो से भाई। सतपुरुष में ध्यान लगाई।।
दुनिया में भरमो मति हीना। जम घर जायेंगे नाम विहीना।।
यही मता हम जगहि लखाये। धर्मदास विरले जिव पाये।।

हे धर्मदास! भवसागर में आकर मैंने सबको सच्चे नाम का रहस्य बताया, पर कोई भी जीव नहीं माना। सब आदि नाम की सुधि भूल चुके थे, सब माया में फँस चुके थे। सब अवतारों की भक्ति कर रहे थे, सच्चे साहिब को किसी ने नहीं पाया। इस तरह सब भूले हुए थे, फिर पार कैसे होते! साहिब का ध्यान कोई नहीं कर रहा था, तीनों लोकों को काल ने ठग लिया था। मैंने सबसे कहा कि सच्चे नाम को पकड़ो और सतपुरुष की भक्ति करो। नाम के बिना सबको यमलोक जाना पड़ेगा। यह बात हमने सबसे कही, पर कोई विरले जीव ही इस बात को समझ सके।

धर्मदास को समझाते हुए आगे साहिब कहते हैं–

धर्मदास तोहि कथा सुनाई। ऐसे जग जीव ज्ञान चलाई।।
यही जगत की उलटी रीति। नाम न जाने काल सों प्रीति।।
वेद रीति सुनियो धर्मदासा। मैं सब भाख कहों तुम पासा।।
वेद पुरान में नामहि भाषा। वेद लिखा जानों तुम साखा।।
छऊ शास्त्र मिलि झगरा कीन्हा। ब्रह्म रूप काहू न चीन्हा।।
चीन्हो है जो दूसर होई। भर्म विवाद करें सब कोई।।
मूल नाम न काहू पाये। साखा पत्र गह जग लपटाये।।
डार पत्र को जो कोई धरही। निश्चय जाय नरक में परही।।
जीव अभागे मूल न जानें। डार पत्र में पुरुष बखाने।।
पढ़े पुराण औ वेद बखाने। सत्त पुरुष का भेद न जाने।।
वेद पढ़े औ भेद न जाने। नाहक यह जग झगरा ठाने।।
वेद पुराण यह कहें पुकारा। सबही से इक पुरुष नियारा।।
ताहि न यह जग जाने भाई। तीन देवे में ध्यान लगाई।।
इनमें मत भटको अज्ञानी। काल झपट पकड़ेगा प्राणी।।
तीन देव पुरुष गम्य न पाई। जग के जीव सब फिरे भुलाई।।

कहा कि संसार की उलटी रीति तो देखो, सच्चे नाम को नहीं समझ पाता और काल से ही प्रीति करता है। वेदों में भी नाम की महिमा है, वेद गवाह हैं। शास्त्रों में निरंजन तक की बात की गई है। मूल नाम की खबर किसी को नहीं हुई, सब शाखा, पत्र आदि में उलझ गये। जो-जो इनमें उलझा, वो नरक ही जायेगा। अभागे जीव डाल, पत्र आदि को ही परम पुरुष कहने लगे। वेद तो पढ़ा, पर भेद नहीं पाया। सब कृत्रिम भक्ति में उलझ गये, जिससे कभी मुक्ति नहीं हो सकती।

सर्गुण माहिं सार न कोई। निर्गुण नाम नियारा होई।।
निर्गुण से सर्गुण है भाई। सर्गुण में यह जग लपटाई।।

रजगुण सतगुण तमगुण कहिये। सब मिट जाये ज्ञान जो लहिये।।
तीनों गुण से सरगुण होई। चौथा पद निर्गुण है सोई।।
निर्गुण नाम निरंजन राई। निज उत्पत्ति बना के खाई।।
ताके परे इक नाम नियारा। सो साहिब है मूल अपारा।।
उनको जग नहिं जाने भाई। काल अंश राखे भरमाई।।
आदि भक्ति करे जो कोई। जाति वर्ण दुरमति सब खोई।।
आदि नाम को नित गुण गावे। भवसागर में बहुरि न आवे।।
आदि नाम है गुप्त अमोला। सो धर्मन मैं तुमसे खोला।।
धर्मदास यह जग बैराना। कोई न जाने पद निरवाना।।
राम राम सब जगत बखाने। आदि नाम कोई बिरला जाने।।
आदि नाम गुप्त संसारा। जो पावै जग से हो न्यारा।।

कहा कि यह संसार सगुण में उलझ गया है। निर्गुण से ही सगुण की उत्पत्ति है। सतगुण, रजगुण और तमगुण से सगुण है, पर निर्गुण इससे परे है। निर्गुण ही निरंजन है, जो सारी उत्पत्ति करके फिर खा जाता है। उससे परे एक न्यारा नाम है, वो साहिब ही सबका मूल है, उन्हें यह संसार नहीं जानता है, क्योंकि काल के दूत जीवों को भरमाए रखते हैं। जो कोई सद्गुरु की भक्ति करके नाम में लौ लगाता है, वो फिर भवसागर में नहीं आता। हे धर्मदास! आदि नाम गुप्त है, वो मैंने तुमसे कहा है। जो इस नाम को पाता है, वो संसार से न्यारा हो जाता है। यह संसार तो पागल है, कोई भी मुक्ति पद को नहीं जानता है।

साहिब धर्मदास से कहते हैं कि यह सब मैंने तुमसे इसलिए कहा कि आगे तुम संसार के जीवों को सच्चे साहिब और सच्चे नाम का संदेश देना।

धोखा में जिव जन्म गँवाई। झूठी लग्न लगाये भाई।।
पीतर पाथर पूजन लागे। आदि नाम घट ही से त्यागे।।

तीरथ बरत करे संसारे । नेम धरम असनान सकारे ।।
भेष बनाय विभूति रमाये। घर घर भिक्षा माँगण आये।।
जग जीवन को दीक्षा देही। सत्तनाम बिन पुरषहि द्रोही।।
ज्ञान हीन जो गुरु कहावै। आपन भूला जगत भुलावै।।
काम क्रोध मद लोभ विकारा। इन्हैं न त्यागै साध बिचारा।।
ऐसा ज्ञान चलाया भाई। सत् साहिब की सुध विसराई।।
यह दुनिया दो रंगी भाई। जिव जह शरण असुर की जाई।।
तीरथ व्रत तप पुन्य कमाई। यह जम जाल तहाँ ठहराई।।
यहै जगत ऐसा अरुझाई। नाम बिना बूड़ी दुनियाई।।

कहा कि यह दुनिया झूठ से ही प्रीत कर रही है। तीर्थ, व्रत, स्नानादि में ही उलझ कर रह गयी है। भेष बनाकर फिर भभूति रमा लेते हैं और घर घर जाकर भिक्षा माँगते हैं, पर काम, क्रोध आदि को नहीं छोड़ पाते हैं। इस तरह सब भूले हुए हैं और दूसरों को भी भुला रहे हैं। हे धर्मदास! यह दुनिया भी दो रंगी है, असुरों की ही शरण में जाती है, नाम के बिना सारी दुनिया भवसागर में बहे जा रही है।

यहि कारण मैं कथा पसारा। जग से कहियो नाम नियारा।।
यही ज्ञान जग जीव सुनाओ। सब जीवों का भरम नशाओ।।
कहत अगोचर सबके पारा। आदि अनादि पुरुष है न्यारा।।
आदि ब्रह्म इक पुरुष अकेला। ताके संग नहीं कोई चेला।।
ताहि न जाने यह संसारा। बिना नाम है जम के चारा।।
नाम बिना यह जग अरुझाना। नाम गहे सो संत सुजाना।।
सच्चा साहिब भजो रे भाई। यहि जग से तुम कहो चिताई।।

इसलिए हे धर्मदास! तुम जीवों को सच्चे नाम का संदेश देकर उनका भ्रम मिटाना। सबसे कहना कि आदि पुरुष सबसे न्यारा है, वो

सबसे अकेला है, उसका कोई चेला नहीं है। उसे संसार नहीं जानता है। नाम के बिना सब जम का चारा बने हुए हैं। इसलिए तुम जग के जीवों को समझाना कि वे सच्चे साहिब की भक्ति करें।

पाथर पूज हिंदु भुलाना। मुरदा पूज भूले तुरकाना।।
कहैं कबीर ये दोऊ भुलाना। आदि पुरुष कोई नहीं जाना।।
भवसागर कोई पार न पावे। या जग में सब गोता खावे।।
भव दरिया है अगम अपारा। पुरुष भक्त उतरेंगे पारा।।
धर्मदास जग कहो समझाई। आदि नाम बिना मुक्ति न भाई।।
जो जन भजिहैं निर्भय नामा। सो हंसा पहुँचै निज धामा।।
यह सतगुरु का ज्ञान है भाई। जो कोई लखे सो लोक सिधाई।।

कहा कि हिंदु पत्थर की पूजा में भूल गये, मुस्लिम मुर्दे की पूजा में उलझ गये, पर कोई भी उस आदि पुरुष को न जान सका। इस तरह सब ही भवसागर में गोते खा रहे हैं। यह भवसागर अथाह है, इससे वही पार होगा, जो परम पुरुष की भक्ति करेगा। हे धर्मदास! तुम सब जीवों से समझाकर कहना कि यह सद्गुरु का संदेश है कि आदि नाम के बिना मुक्ति नहीं मिल सकती, जो कोई उस सच्चे नाम को भजेंगे, वे ही अमर लोक में पहुँचेंगे।

साहिब आगे समझाते हुए कहते हैं –

कहैं कबीर सुनो धर्मदासा। अब निज भेद कहों तुम पासा।।
आदि न अंत हती न माया। उत्पत्ति प्रलय हती न काया।।
सोहं ब्रह्म न नहिं ओंकारा। काल निरंजन नहिं औतारा।।
दश औतार न चौबीस रूपा। तब नहिं होता ज्योति स्वरूपा।।
वहाँ नहीं है दिन अरु राती। ऊँच न नीच जात न पाति।।
नाहीं सुख पवन नहिं पानी। समरथ गति काहू नहिं जानी।।
आदि ब्रह्म नहिं करे पसारा। आप अकह तब हता नियारा।।

है अनाम अक्षर के माहीं। निहअक्षर कोई जानत नाहीं।।
अमर लोक जहँ अम्मर काया। परम पुरुष जहाँ आप रहाया।।
धर्मदास जहँ वास हमारा। काल अकाल न पावे पारा।।

हे धर्मदास! जहाँ मैं रहता हूँ, वहाँ न आदि है, न अंत, न उत्पत्ति है, न प्रलय, न काया ही है। वहाँ सोहं भी नहीं है, ओंकार भी नहीं है, ज्योति निरंजन भी नहीं है। अवतार आदि भी नहीं हैं। दिन, रात, हवा, पानी आदि कुछ भी नहीं है। वो अनाम है, नि:अक्षर है। वो अमर लोक है, वहाँ अमर काया है, जहाँ परम पुरुष खुद रहता है। हे धर्मदास! वहीं मेरा वास है, जिसका पार काल नहीं पा सकता।

पुरुष नाम गहो रे भाई। ताते हंसा लोक सिधाई।।
आदि नाम है जिव रखवारा। उनको सब कोई करो पुकारा।।
अमर लोक साहिब का न्यारा। जहाँ पुरुष का है दरबारा।।
आदि पुरुष जहँ आप अकेला। धर्मराय नहिं मन का मेला।।
अंधकार जहँ कबहुँ न होई। सदा जोति अमरापुर सोई।।
आदि नाम जो ध्यान लगाई। तब हंसा सतलोकहि पाई।।
ऐसा लोक साहिब का भाई। जहँ हंसा सुख सदा रहाई।।
ताहि लोक में जो कोई जावै। भवसागर में बहुरि न आवै।।
सार युक्ति मैं तुमसे कहिया। कहन सुनन को अब नहिं रहिया।।

हे धर्मदास! परम पुरुष के नाम से ही जीव उस लोक में जा सकता है। यह आदि नाम जीव की रक्षा करने वाला है, उस लोक में पहुँचाने वाला है। साहिब का वो लोक सबसे न्यारा है, जहाँ परम पुरुष का दरबार लगता है। वहाँ कभी अंधकार नहीं है, सदा उजियारा रहता है। वहाँ हंसा सदा सुख में मग्न रहता है। उस लोक में जो भी जाता है, वो फिर वापिस नहीं आता। हे धर्मदास! मैंने तुमसे भक्ति का सार बता दिया, इसलिए अब और कुछ कहने सुनने को बाकी नहीं रहा।

सतपुरुष को जानसी

जिस दिन सद्गुरु की प्राप्ति होती है, सत्य की खोज समाप्त हो जाती है। साहिब ने जितनी सद्गुरु की महिमा कही है, उससे ज़्यादा झूठे गुरु से बचने को कहा है। प्राचीन काल में जब युद्ध करते थे तो पूछते थे कि किसके चेले हो! इससे उसकी ताक़त का अंदाजा लगा लेते थे यानी गुरु की उर्जा शिष्य में प्रविष्ट होती है। इसलिए झूठे गुरु से बचने को भी कहा।

झूठे गुरु के पक्ष को, तजत न कीजे बार।
पार न पावै शब्द का, भरमें बारं बार।।

पब्लिक के समर्थन, मीडिया के प्रचार से रातों-रात किसी भी आदमी को कलयुग में महात्मा बनाया जा सकता है। इसलिए-

गुरु कीजिये जानि के, पानी पीजै छानि।
बिना बिचारे गुरु करे, परै चौरासी खानि।।
भेष देख मत भूलिये, बूझि लीजिये ज्ञान।
बिना कसौटी होत नहिं, कंचन की पहिचान।।

गुरु को कैसे परखें! कैसे पता चले कि ये सद्गुरु हैं। साहिब कह रहे हैं-**'सतपुरुष को जानसी, तिसका सतगुरु नाम।'** ऐसे तो सभी कहेंगे कि हम जानते हैं। कोई पेड़ को सत्पुरुष कह रहा है, कोई पानी को। नहीं! **'तीन लोक में यम का राज, चौथे लोक नाम निर्वाण।'** जो तीन लोक के स्वामी की बात कर रहा है, वो गुरु है, सद्गुरु नहीं। लेकिन अगर सत्पुरुष की भक्ति बता रहा है तो इतना काफी नहीं है। **'सत्पुरुष को जानसी, तिसका सद्गुरु नाम।'** तो अगर सभी कह रहे हैं कि हम पहुँचे हुए हैं तो कैसे पता चले! साहिब लक्षण बोल रहे हैं सद्गुरु के। कह रहे हैं-**प्रथम गुरु हो निर्वासना।**

आप विचार करना; अगर शादी किया है तो माया में फँसा था न। बच्चे ऐसे तो हुए नहीं। आप विचार करके देखना। ऐसा नहीं कि शादी नहीं की और विषय विकार कर रहा है। फिर तो अपना भी बेड़ा ख़राब और दुनिया का भी। काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार में से एक भी होगा तो सोचना, सभी हैं। जिसमें काम है, क्रोध भी होगा, लोभ है तो मोह भी होगा। एक जगह कुछ लोग बधाइयाँ दे रहे थे कि गुरु जी के यहाँ बच्चा हुआ। मेरे ख़्याल से बड़े शर्म की बात है। इसलिए कह रहे हैं–**'बिन जाने जो गुरु करई। सो नहीं भवसागर सो तरई।।'** गुरु ने सबसे प्रेम करना है; उसने वासना से उत्तर नहीं देना है प्रेम का। अगर विषय वासनाओं में फँसा है तो प्रेम का सही जवाब नहीं दे पायेगा। फिर सारग्राही होना चाहिए गुरु। जो स्वयं दूसरों पर निर्भर है, वो दूसरों को क्या देगा, दूसरों का कल्याण क्या करेगा; नानक देव, तुकाराम, रविदास आदि जितने भी संत हुए, यह काम नहीं किया। साहिब ने झोंपड़ी में ज़िंदगी गुज़ारी।

आज के गुरुओं को देखें तो बॉडिगार्ड भी साथ हैं। मेरे पास एक आदमी आया, कहा–दीक्षा दो। मैंने कहा–पहले सत्संग सुनो। कहा–मैंने आपको परख लिया है। कहा–पहले मैं कहीं दूसरे महात्मा जी के पास गया तो देखा वहाँ अजीब माहौल था, चार बॉडिगार्ड महात्मा जी के पीछे खड़े थे। मैंने सोचा कि गुरु जी को खुद ही जान के लाले पड़े हैं तो हमारी रक्षा क्या करेंगे, हमें अभयपद कैसे देंगे! महात्मा जी को मृत्यु का इतना भय है तो आत्मनिष्ठ कैसे हो सकते हैं! यह सोचकर मैं वहाँ से भाग आया। फिर एक और महात्मा जी का नाम सुना तो गया; वहाँ देखा तो तीन तरह की व्यवस्था थी बैठने की। वी.आई.पी. लोगों के लिए अलग जगह थी, फिर मध्यम वालों के लिए अलग और जो ग़रीब हैं, उनके लिए अलग। सोचा, यहाँ तो वर्गीकरण है, यहाँ सबमें एक आत्मा नहीं देखी जा रही है। वहाँ से भी भाग आया। फिर जम्मू आया तो देखा, चारों ओर आपकी निंदा है। आपको भी देखा। मैंने पाया, आप तो

फक्कड़ (निराली) किसम के हैं, अपने हाथ से सभी काम कर रहे हैं, किसी का भय नहीं है। मैंने आपको 25 दिन परखा है। दूसरे महात्माओं की तरह बड़ी-2 दाढ़ी, बाल आदि रखकर आप दुनिया को डरा नहीं रहे हैं, और सादगी से रह रहे हैं।

आप जैसे हैं, वैसे रहें। बहरुपिए मत बनें। कभी-2 किसी को सुंदर देखकर इज़्ज़त करने लगते हैं। क्या आत्मा को देख कर इज़्ज़त दे रहे हैं! नहीं! यह तो लौथड़े को देखकर हुआ। कभी पैसा देखकर इज़्ज़त कर रहे हैं यानी पैसे को इज़्ज़त दे रहे हैं, पैसे को प्रणाम कर रहे हैं। तो जो बहुरुपिये नहीं हैं, उनसे हम कभी-2 बदतमीजी से पेश आ रहे हैं। यह भक्ति नहीं है। देख रहा हूँ कि यह दुनिया डराए जा रही है। कोई गले में चेनियाँ डाल कर दिखा रहा है कि धनवान हूँ यानी डरा रहा है धन से, कहना चाह रहा है कि इज़्ज़त दो। कोई पहलवान है तो नंगा घूम रहा है। कोई निक्कर डाल कर तो कोई बनियान में घूम रहा है। मैं कहना चाहता हूँ कि मल-मूत्र के द्वार क्यों नहीं दिखा रहा! तो कमज़ोर को ही डरा रहा है। कोई लड़ता है तो कहता है कि फलाने का लड़का हूँ। कोई जटाएँ बड़ाकर, कोई रंगीले कपड़े पहनकर डरा रहा है कि ईश्वर की शक्तियाँ हैं मुझमें, इज़्ज़त दो, नहीं तो भस्म कर दूँगा।

मैं रेल में यात्रा के दौरान मुँह धो रहा था। एक आदमी ने मुझे धक्का दिया और मुझे पीछे कर खुद मुँह धोने लगा। मेरे साथ जो था, कहा-तू जानता नहीं, तेरे जैसे कई रोज़ इनके पाँव पड़ते हैं। मैंने उसे इशारे में कहा-क्यों डरा रहा है, चुप! वो सिर से पाँव तक देखने लगा कि कौन है। पूछा कौन हो? मैंने कहा-कुछ नहीं, तुम मुँह धो लो। दुनिया डराए जा रही है, मैंने कहा-मधु! दुनिया को डराना नहीं है।

हमने गुरुत्व का नक्शा अपने दिल में अजीब-सा बना रखा है। देखना होगा, गुरु जी धन से मौज मस्ती तो नहीं कर रहा। यदि कर रहा है तो किनारा कर लेना। तीसरा देखना, लोभी तो नहीं। अगर पैसे के लिए काम कर रहा है तो कुछ नहीं दे पायेगा।

काम क्रोध मद लोभ की, जब लग घट में खानि।
क्या पंडित क्या मूरखा, दोनों एक समान।।

इसलिए देखना, कहीं लालची तो नहीं। जहाँ लोभ है, वहाँ पाप है। इसलिए लोभी होगा तो पापी भी होगा ही होगा। जो पापी है वो महात्मा नहीं।

गुरु लोभी शिष्य लालची, दोनों खेलें दाँव।
कहैं कबीर कैसे तरे, चढ़ि पत्थर की नाव।।

फिर गुरु निर्बन्धन हो। उसकी बीबी, भाई, बहन आदि नहीं हों। यदि होंगे तो उन्हीं को सब दे जायेगा। पाँचवाँ सत्यवान हो और छठा सर्वज्ञी हो। यानी आंतरिक मण्डलों का ज्ञान हो, आपकी शंकाओं का निराकरण कर सके। सातवाँ और अंतिम लक्षण उसमें यह हो कि सत्पुरुष में मिल चुका हो। **'सत्पुरुष को जानसी, तिसका सद्गुरु नाम।'** इसका पता कैसे चले! अगर पहले वाले लक्षण उसमें हैं तो समझना कि अंतिम भी होगा।

जब तक गुरु मिले नहीं साँचा।
तब तक करो गुरु दस पांचा॥

साहिब के कौतुक

कबीर साहिब के विषय में लोगों में कई भ्रांतियाँ हैं। ये भ्रांतियाँ पाखण्डियों ने फैलायी हैं। साहिब की छवि को बिगाड़ने के लिए पाखण्डियों ने कहीं उन्हें नीरु-नीमा की संतान बनाया तो कहीं कमाल-कमाली को उनके बेटा-बेटी बनाया। फिर कहीं उन्हें मुसलमान तो कहीं नीची जाति का बनाया ताकि लोग वहाँ ना जाएँ।

साहिब को अनेक यात्नाएँ भी दी गयी। 52 बार उन्हें मौत की सज़ा दी गयी, जिस कारण साहिब को अनेक कौतुक भी करने पड़े। पर पाखण्डियों ने इन कौतुकों को भी छिपा दिया। आज समाज का हरेक वर्ग समझता है कि साहिब जुलाहे के घर पैदा हुए। नहीं! आओ, साहिब के विषय में प्रचारित गलत धारणाओं को अपने दिल से दूर कर उनकी वास्तविकता को जानें, साहिब के जीवन के विषय में पाखण्डियों द्वारा छिपाए गये सत्य को जानें।

पूर्व जन्म की प्रीत से तोहि मिला हूँ आप

लोगो ने साहिब को नीरू- नीमा की संतान माना। नहीं! यह बिलकुल गलत है। साहिब ने अपनी वाणी में साफ कहा-**'संतो अविगत से चला आया, कोई भेद मर्म ना पाया।'** कहा-मेरा भेद कोई नहीं पाया। **'ना हम रहने गर्भवास में, बालक होइ दिखलाया।'** कह रहे हैं कि माँ के पेट में रहा ही नहीं, माया का शरीर धारण नहीं किया। **'काशी तट सरोवर भीतर, तहाँ जुलाहा पाया।'** कहा-काशी के तालाब में मैं जुलाहे को मिला। आगे कह रहे हैं-**'ना हमरे मात-पिता हैं। ना संग गिरही दासी।'** कह रहे हैं-ना मेरी कोई माँ है, ना बाप और ना कोई पत्नी ही है। **'नीरू के घर नाम धराये, जग में हो गई हाँसी।'** कहा-नीरू के घर में मेरा नाम रखा गया और दुनिया में हँसी हो गयी। आगे कह रहे हैं-

आणे तकिया अंग हमारी, अजर अमर पुर डेरा।
हुक्म हैसियत से चले आए, काटन यम का फेरा।।

कहा–मैं अमर लोक से आया, काल के फंदे से जीवों को छुड़ाने आया।

साहिब का अवतरण भी बड़ा प्यारा है। काशी के लहरतारा तालाब के किनारे जब रामानंद जी के शिष्य अष्टानंद जी ध्यान-मग्न थे तो तालाब के मध्य एक अद्‌भुत प्रकाश आकाश से उतरा। अष्टानंद जी की आँख खुल गयी। उन्होंने उस प्रकाश को कमल के पत्ते पर बालक के रूप में परिवर्तित होते हुए देखा। हैरान रह गये और रामानंद जी को सारा वृत्तांत कह सुनाया। रामानंद जी जान गये, यह कोई साधारण कौतुक नहीं हुआ है; कहा–उस बालक का प्रताप समय आने पर दुनिया को पता चलेगा।

संयोग से नीरू और नीमा वहाँ से जा रहे थे। गौने(मुकलाबे) के समय नीरू अपनी स्त्री नीमा को लेकर वहाँ से गुज़र रहा था। नीमा को प्यास लगी तो वो तालाब पर गयी। उसने वहाँ साहिब को कमल के पत्तों पर हाथ-पैर मारते देखा। इतना सुंदर बालक देखकर चकित हुई। माताओं में वैसे भी प्रेम वात्सल्य अधिक होता है.... उठा लाई। नीरू ने कहा–यह किसे ले आई हो! कहा–देखो, कितना सुंदर बालक है, वहाँ तालाब में मिला, किसी ने छोड़ दिया है। नीरू ने कहा–इसे फेंक दो वहीं पर। नीमा ने कहा–इतना सुंदर बालक मैं नहीं छोड़ूँगी। नीरू ने बड़ा समझाया कि इसे ले चलेंगे तो लोग हँसेंगे, कहेंगे कि गौने के समय ही इन्हें एक बच्चा भी था। पर जब नीमा नहीं मानी तो नीरू मारने लगा। मजबूर होकर नीमा उस बालक को छोड़ने जा रही थी।

तब साहिब हुँकारिया, ले चल अपने साथ।
मुक्ति संदेश सुनाऊँगा, मैं आया यहि काम।।

कहा–अपने साथ ले चलो, मुक्ति संदेश सुनाऊँगा।

पूर्व जन्म की प्रीत से, तोहि मिला हूँ आप।
मुक्ति संदेश सुनाऊँगा, ले चल अपने साथ।।

जब बालक के ये शब्द सुने तो नीमा निडर हो गयी और नीरू ने भी कुछ नहीं कहा; दोनों उसे खुशी-2 घर ले आए।

पूर्व जन्म की प्रीत

नीरू और नीमा को पूर्व जन्म की प्रीत के कारण साहिब मिले। यह पूर्व जन्म की प्रीत कैसी! क्योंकि द्वापर में साहिब का एक परम-भक्त था-सुपच सुदर्शन। हर युग में साहिब यहाँ आए। **'युगन-2 हम यहाँ चले आए, जो चीह्ना तहं लोक पठाए।।'** तो सच सुपच को साहिब ने अमर लोक की यात्राए

कराईं। सुपच ने साहिब स

कहा कि मेरे माता-पिता को भी नाम दो,

मर लोक ले चलो।**कहे सुपच सतगुर सुन लीजे। ह**

मरे मात पिता गति दीजे।।

बंदी छोर करो प्रभु जाई। जम के देस बहु दुख पाई।।

तब साहिब ने उन्हें बहुत समझाया, पर वे माने नहीं।

मैं बहुत भांति पिता समुझावा। मातु पिता परतीत ना आवा।।

साहिब ने कहा, लेकिन मैं इन्हें पार ज़रूर उतारूँगा। वे मर गये और अगले जन्म में ब्राह्मण-ब्राह्मणी हुए।

संत सुदरसन के परतापा। मानुष जनम विप्र के छापा।।
दोनों जन्म ठाम दोय लीनां। पुनि विधि मिलै तिनहि कहँ दीना।।
कुलपति नाम विप्र कर कहिया। नारि नाम महेसरि रहिया।।

उन्हें कोई बच्चा नहीं था, इसलिए वो सूर्य से पुत्र माँग रही थी। इतने में साहिब उसकी झोली में आकर गिर पड़े।

बहु अधीन पुत्र हित नारी। करि असनान सूरज व्रत धारी।।
अंचल लै विनवै कर जोरी। रुदन करे चित सुत कहँ दौरी।।
ततछन हम अंचल पर आवा। हम कहँ देख नार हरषावा।।

बालक को देख वो बड़ी खुश हुई, सोचा कि सूर्य ने पुत्र दे दिया.... घर ले आई। तब साहिब ने सोचा, इन्हें ले चलता हूँ। छोटेपन से ही उन्हें समझाने का प्रयास किया, पर जब उनके हृदय में बात नहीं आयी, बालक समझकर उन्होंने साहिब पर विश्वास नहीं किया तो फिर साहिब लुप्त हो गये।

पुनि हम सत शब्द गोहरावा। बहुत प्रकार ते उनहिं समझावा।।
तिन हृदय नहिं सब्द समाया। बालक जानि परतीत ना आया।।
ताही देह चीन्हसि नहिं मोंही। भयो गुप्त तहँ तन तजि ओही।।

तो दूसरे जन्म में वो ऊदा और चंदन नाम से महाजन हुए। तब साहिब उनके समीप के तालाब में बालक रूप में प्रगट हुए और एक दिन वहीं रहे। जब सुबह ऊदा स्नान के लिए आई तो सुंदर बालक देख घर ले आई।

बालक रूप कीन्ह तेहि ठामा। कीनेउ ताल माहिं बिसरामा।।
कमल पत्र पर आसन लाये। आठ पहर हम तहाँ रहाये।।
पाछे ऊदा असनानहिं आयी। सुंदर बालक देखि लुभायी।।
दरस दियो तिहिं सिसु तन धारी। ले गयी बालक निज घर नारी।।

जब साहिब को लेकर ऊदा अपने घर आई तो चंदन ने पूछा– अरी भाग्यवान! इसे कहाँ से लायी हो?

ले बालक गिरह अपने आयी। चंदन साहु अस कहा सुनायी।।
कहु प्यारी बालक कहँ पायी। कौनी विधि ते इहवाँ लायी।।

तब ऊदा ने बताया कि ऐसे-2 वहाँ सरोवर में मिला। इतना सुंदर बालक देखकर मैं इसे ले आई।

कह ऊदा जल माहीं पावा। सुंदर देखि मोरे मन भावा।।

चंदन ने उसे डाँटा, कहा-इसे वापिस छोड़ आ, नहीं तो जाति-बिरादरी के लोग हँसी उड़ायेंगे।

कह चंदन तै मूरख नारी। बेगि जाहु दै बालक डारी।।
जाति कुटुम हँसिहैं सब लोगा। हंसत लोग उठि है तन सोगा।।

तब जैसे ही ऊदा साहिब को वापिस छोड़ने चली, साहिब उसके हाथों से अंतर्धान हो गये। तब दोनों पछताने लगे, रोने लगे और जंगल में ढूँढ़ने लगे, पर साहिब न मिले।

चलि भइ मोहि पवाँरन जबहीं। अंतरधान भये हम तबही।।
भयो गुप्त तेहि करसे भाई। रुदन करै दोनों बिलखाई।।
विकल होय बन ढूँढ़त डोले। मुग्ध ज्ञान कछु मुख नहिं बोले।।
यहि विधि बहुत दिवस चलि गयऊ। तजि तन जनम बहुरि तिन पयऊ।।

साहिब के दर्शन के प्रभाव से उन्हें बार-2 मानव चोला ही मिला। अबकी बार यानि चौथे जन्म में वे नीरू-नीमा हुए, इसलिए साहिब ने कहा कि पिछली प्रीत के कारण तुम्हें मिला।

मेरा नाम कबीर है

साहिब को घर में लाकर बेचारे नीरू ने सबको बताना शुरू किया कि यह बालक ऐसे-2 वहाँ मिला। पर दुनिया बड़ी ज़ालिम है, सब मखौल उड़ाने लगे, किसी ने विश्वास नहीं किया।

लोगों ने कहा कि इसका नामकरण करो। अब पंडितों और

काज़ियों –दोनों को बुलाना पड़ा, क्योंकि साहिब ना हिंदू थे, ना मुसलमान। उनका रहस्य किसी को पता ना चला कि कौन हैं।

पहले पंडितों को बुलाया गया। उन्होंने आकर विचार किया कि क्या नाम रखें। इतने में साहिब ने स्वयं कहा–हे पंडितो! मेरा नाम रखने की कोई ज़रूरत नहीं है, मेरा नाम कबीर है।

पंडित करन जो लगे बिचारा। तब शिशु निजमुख बचन उचारा।।
नाम कबीर हमारा अहई। और नाम जनि पंडित कहई।।

यह सुनकर सब चकित हो गये, कोई कहने लगा कि यह तो कोई सिद्ध पुरुष लगता है, कोई कहने लगा कि यह ईश्वर का अवतार लगता है।

यह सुनिके सब चकृत भैऊ। शिशु निजु नाम आपते कहेऊ।।
कोई कहै यह दानौ देवा। कोई कहै यह अलख अभेवा।।
कोई ईश्वर अंश बतावा। कोई कह आप देह धरि आवा।।

संत गरीबदास जी ने इसपर बड़ा ही प्यारा कहा है–

कासी उमगी गुल भया, मोमिन का घर घेर।
कोई कहे ब्रह्मा विष्णु है, कोई कहे इन्द्र कुबेर।।
कोई कहे वरुन धर्मराय है, कोई कोई कह ईस।।
सोलह कला सुमान गति, कोई कहे जगदीस।।

मेरा शरीर नहीं है

नामकरण के लिए जब काज़ियों को बुलाया गया तो काज़ी ने कुरान खोली और देखने लगा। अब कुरान में उसे कबीर, अकबर, कुबरा, किबरिया ही दिखाई दिया। उसने सोचा, ये तो खुदा के नाम हैं, हमारा धर्म ख़तरे में पड़ जायेगा, इनमें से नहीं रखना है। पर वो जहाँ देखता, वहाँ कबीर ही दिखाई देता। ग़रीबदास जी ने बड़ा प्यारा कहा–

सकल कुरान कबीर है, हरफ़ लिखे जो लेख।
कासी के काज़ी कहैं, नई दीन की टेक।

तो खिन्न होकर काज़ियों ने विचार किया और नीरू से कहा कि यह क़ाफ़िर है, इसे अंदर ले जाकर मार डाल। नीरू साहिब को अंदर ले गया और छूरे से मारने लगा। नीरू छूरा मारता था, पर छूरा आर-पार हो जाता था, साहिब पर कोई असर न हुआ। तब साहिब ने नीरू से कहा कि मेरा कोई शरीर नहीं है, यह केवल तुम्हारे देखने के लिए है, मैं ना जन्मता हूँ, न मरता हूँ।

ना मेरे अस्थि रक्त नहिं चामा, हम हैं शब्द प्रकाशी।
देह अपार पार पुरुषोत्तम, कहि कबीर अविनाशी।।

यह सुन नीरू डरकर बाहर भाग आया। तो अंत में हारकर कबीर नाम ही रखना पड़ा।

कक्का केवल नाम है, बब्बा वरण शरीर।
रर्रा सबमें रमि रहा, जिसका नाम कबीर।।

कबीर का अर्थ ही यही है-कायावीर यानी जिसका कोई शरीर नहीं है। ग़रीबदास जी ने बड़े प्यारे शब्द कहे हैं-

अनंत कोटि ब्रह्माण्ड में, बंदी छोड़ कहाय।
सोतो पुरुष कबीर है, जननी जना न माय।।

तथा-

साहिब पुरुष कबीर ने, देह धरे न कोय।
शब्द स्वरूपी रूप है, घट-घट बोलै सोय।।

अन्न अहार करता नहीं

पानी ते पैदा नहीं, श्वासा नहीं शरीर।
अन्न अहार करता नहीं, ताको नाम कबीर।।

–नाभादास जी

साहिब छोटेपन में भोजन भी नहीं करते थे, पर फिर भी उनका शरीर बढ़ता जाता था। नीरू ने दुखी होकर साहिब से कहा कि आप भोजन करें। तब साहिब ने कहा कि एक बिन ब्याही बछिया लाओ, उसी का दूध हम पियेंगे।

ततछन सो जोलहा चलि जाई। गऊ बछिया कोरी ल्याई।।
कोरा भांडा एक गहाई। भांडा बछिया शीघ्र ही आई।।
दोऊ कबीर के सम्मुख आना। बछिया दिशा दृष्टि निज ताना।।
बछिया हेठ सो भांडा धरेऊ। ताके थनहि दूध ते भरेऊ।।
दूध हमारे आगे धरही। यही विधि खानपान नित करही।।

साहिब ने उस बछिया को देखा तो उसके स्तनों से दूध आने लग गया और नीचे रखा बरतन भर गया। इस तरह साहिब भोजन करने लगे।

किसकी सुन्नत करना चाहते हो

एक समय जुलाहों ने मिलकर साहिब से कहा कि इसकी सुन्नत कराओ। सुन्नत करने के लिए जब नाई अंदर कमरे में गया तो साहिब ने पाँच शिश्न इन्द्रियाँ दिखा दीं, कहा–इनमें से जिसकी सुन्नत करना चाहते हो, कर लो। वो भाग कर वापिस आ गया, कहा–यह क्या चीज़ है !

तब नाई कबीर ढिग आया। ले उस्तरा निकट नियराया।।
पाँच इन्द्री ताको दिखलावो। काटि लेहु जो तोहि मन भावो।।
यह लखि भभरि के नाई भागा। सुन्नत नहीं कीन डर लागा।।

तब काशी के सब काज़ी और पण्डित इकट्ठा हुए और नीरू से कहा कि इसकी सुन्नत कराओ। पर नाई तो भाग चुका था। इतने में साहिब ने पास खड़े काज़ियों और ब्राह्मणों से कहा–

जो तुम बामन बामनी जाया। आन बाट काहे न आया।।
जो तुम तुरक तुरकनी जाया। पेट में सुन्नत क्यों न कराया।।

कहा–अपने को श्रेष्ठ समझते हो तो दूसरे रास्ते से आना था जन्म लेकर। **'एक ही राह से सब जग आया, एक ही पुनि सबै समाया।। बैगर–2 नाम धराया, एक माटी के भाण्डे ।।'** तो इस तरह यदि सुन्नत से ही मुस्लिम हुआ जाता है तो उस खुदा ने पेट में ही कर देनी चाहिए थी।

एक तरफ तो साहिब की ज्ञान से भरी बातें सुन वे लज्जित हो रहे थे, पर अहंकार से भरे होने के कारण चुप भी नहीं बैठ रहे थे। तो उन्होंने नीरू से कहा कि इसको बाँध कर जबरन सुन्नत कर दो। साहिब को बाँध दिया गया और लोग नाई को ढूँढने लगे। साहिब ने पुनः पास खड़े काज़ियों और पंडितों से कहा–

काजी कौन किताब बखाना।
झंखत बकत रहौ निसि बासर, मति एकौ नहिं जाना।।
ज़ोर जुलम तुम करते हो, मैं न बदोंगा भाई।
जो खुदा तुव सुन्नत करत तो आप काटि किन आई।।
सुन्नत कराए तुरक होय बैठे , औरत का क्या करिये।
अर्ध शरीरी नारि बखानो, ताते हिंदू ही रहिये।।

पंडितों से भी कहा–

डालि जनेऊ ब्राह्मण होय बैठे , औरत नू क्या पहिराया।
वह तो जन्म की शूद्रिन परशे, सो तुम क्यों खाया।
हिंदू तुरक कहाँ ते आया, किन यह राह चलायी।
दिल में खोजो दिल में खोजो, विहिस्त कहाँ किन पायी।

हिंदू मुसलमान की एक राह है, सतगुरु मोहिं बतायी।
कहैं कबीर सुनो भाई साधो, राम कह्यो न खुदाई।।

इतने में साहिब का बंधन अपने आप खुल गया और साहिब खड़े होकर चल पड़े। ....सब आश्चर्य से देखते रह गये।

रामानंद को गुरु बनाया

कबीर साहिब ने छोटेपन से ही सत्य का संदेश समाज को देना शुरू किया। तब एक ने कहा कि गुरु के बिना तो ज्ञान नहीं होता। ऐसे में साहिब ने विचार किया और गुरु परंपरा की प्रतिष्ठा को कायम रखते हुए गुरु करने का फैसला किया। पर गुरु किसे करें! उस समय स्वामी रामानंद परम वैष्णव थे, पर वे निम्न जाति के लोगों को दीक्षा नहीं देते थे। अब साहिब तो सबकी नज़र में जुलाहे के बेटे थे, पर साहिब ने ऊँच नीच के भेदभाव को समाप्त करने हेतु उन्हीं को गुरु करने का फैसला कर लिया।

रामानंद जी सुबह-2 अमृत बेले में पंच गंगा घाट पर स्नान करने आया करते थे। कबीर साहिब ने छोटे-से बालक का रूप धारण किया और वहाँ घाट की सीढ़ियों पर लेट गये। जब स्वामी जी घाट की सीढ़ियाँ उतरने लगे तो उस समय थोड़ा-2 अँधेरा-सा भी था, उन्होंने साहिब को नहीं देखा और उनका पैर सीधा उनसे जा टकराया। बाल रूप में साहिब रोने लगे। आवाज़ सुनकर रामानंद जी झुके और बालरूप साहिब से कहा-रो मत बेटा, राम-2 बोल। ऐसे में उनके गले में पड़ी माला भी साहिब के गले में जा गिरी।

अब सुबह होते साहिब वैष्णव रूप बनाकर **'राम-राम'** कहने लगे और उपदेश देने लगे। लोगों ने सोचा, आज अचानक कबीर को क्या हो गया है, पूछा-भई, क्या बात है! साहिब ने कहा कि रामानंद जी ने उन्हें दीक्षा दी है। जब पंडितों को यह बात पता चली तो वे रामानंद जी के पास गये, कहा-आपने कबीर को दीक्षा क्यों दी? रामानंद जी ने

कहा–मैंने नहीं दी दीक्षा। उन्होंने कबीर साहिब को बुलवाया और कहा कि मैंने तुम्हें कब दीक्षा दी! साहिब ने गंगाघाट वाला वृत्तांत सुना दिया। रामानंद जी ने कहा–पर वो तो छोटा–सा बालक था। साहिब ने पुनः अपना वही छोटा–सा रूप बना लिया और रामानंद जी से पूछने लगे कि–हे गुरुदेव! क्या मैं आपको इस रूप में नहीं मिला था! रामानंद जी समझ गये, साहिब साधारण नहीं हैं, उन्हें अपना शिष्य स्वीकार कर लिया।

बादशाह का जलन रोग दूर किया

सिकंदर लोदी को जलन का रोग था, सारे शरीर में जलन होती थी। उसने बहुत इलाज करवाया, पर उसकी वो जलन दूर न हुई। वो उन दिनों काशी आया था। उसने वहाँ के लोगों से पूछा कि क्या कोई यहाँ है, जो मुझे इस रोग से मुक्त कर सके। जब यह ख़बर काज़ियों और पंडितों को हुई तो सोचा, इसे कबीर के पास भेजते हैं, वो उलटी बात करेगा और बादशाह उसका सिर काट देगा। यह सोच सब तुरंत सिकंदर लोदी के पास पहुँचे।

काजी पंडित मिलि के , कहा शाह से जाय।
है कबीर दरवेश यक, ताको लेहु बुलाय।।

.....तब सिकंदर ने साहिब को बुलवा भेजा। जैसे ही साहिब वहाँ पहुँचे, उनके दर्शन मात्र से सिकंदर का जलन रोग दूर हो गया। उसके दिल में साहिब के प्रति प्रेम उत्पन्न हो गया। पर शेखतकी, जो बादशाह का पीर था, ईर्ष्या से जल उठा।

शाह न छोड़े हमकहँ, बढ़यो प्रेम मनमाहिं।
शेखतकी तेहि पीर थे, सो मुरझे मनमाहिं।।

षड्यंत्र रचा गया

जब काज़ियों और पंडितों को पता चला कि तकी साहिब से ईर्ष्या करता है तो तकी के पास जाकर साहिब के ख़िलाफ़ षड्यंत्र रचा।

काशी के पंडित अरु काजी। शेखतकी मिली परपंच साजी।।
कह काजी सुनु शाह के पीरा। कैसेहु मारा जाय कबीरा।।
यह जोलहा जौं मारा जाई। तौ हम सबकी टरै बलाई।।

अब पाखण्डियों ने तकी से कहा कि यह बड़ा काफ़िर है, किसी को नहीं बख़्शता है; हमारे बलि, नमाज़ आदि कार्यों को पाखण्ड कहता है और काशी के सब लोग भी इसी की प्रशंसा करते हैं, हमें कोई नहीं मानता।

देखो, कितनी समस्या है पाखण्डियों को। हमारे विरोध का कारण क्या है! भाइयो! इतिहास अपने को दोहरा रहा है। तो तकी ने कहा–चिंता मत करो, मैं इसे किसी भी तरह मरवा दूँगा।

कहै तकी सुन पंडित काजी। क्या कबीर जोलहा है पाजी।।
चाहो तो आतश में जारो। चाहो टूक-2 करि डारो।।
चाहो जल के बीच डुबाओ। चाहो देग में आँच दिलावो।।
चाहो आरी से चिरवाओ। चाहो खाक त्वचा भरवाओ।।

तो इस तरह षड्यंत्र रचा गया। जैसे अखनूर में मुझे ज़िंदा जला डालने का षड्यंत्र रचा था। दो बार ज़हर भी दिया गया। पाखण्डियों ने राजनेताओं से मिल षड्यंत्र रचे। यह काम पाखण्डियों ने बहुत पहले से किया है। राजाओं ने महात्माओं को कष्ट नहीं देने चाहे हैं, पर पाखण्डियों ने उन्हें मजबूर किया है। तो पाखण्डी खुश हो गये, क्योंकि साहिब के कारण उनके स्वार्थों की पूर्ति नहीं हो पा रही थी। वे भोली-भाली जनता को कर्मकाण्डों में फँसाकर पैसा ठग रहे थे, पर अब जनता साहिब के ज्ञान से प्रभावित हो उनके पास नहीं जा रही थी। पाखण्डियों

ने कहा–

काशी के लोग हमें नहिं मानैं।
जोलहा की सब सिफत बखानैं।।

इसलिए तकी को साहिब के विरुद्ध देखकर वे बड़े खुश हुए। तकी सीधा बादशाह के पास पहुँचा, कहा–कबीर को मरवा दे; वो काफ़िर है। यदि ऐसा नहीं किया तो तुम्हें शाप दे दूँगा। सिकंदर लोदी ने कहा–

तुमने खुद कहा था कि पीर और फ़कीर अल्ला के समान होते हैं, उन्हें मारना पाप है, तो फिर ऐसा क्यों कहते हो! इसलिए अब मुझसे ऐसा नहीं होगा। तकी नहीं माना। तब बादशाह ने कहा–फिर तुम जो करना चाहो, कर लो, मैं कुछ नहीं करूँगा। तुम मेरे पीर हो और वो साधु है, उसकी कृपा से मेरी जलन दूर हुई है।

कहै सिकंदर पीर सुन, मोहि तुमारि पनाह।
जो चाहो सो करो यहि, तुमें कोई रोकै नाहं।।
जो वह होते रैयत, तो हम करते ज़ोर।
वह तो अलमस्त फ़कीर है, तहाँ न फावै मोर।
तुमहूँ कही समझाय, पीर फ़कीर अल्लाह।
अब तुम कहते मारने, यह न होय हम पाह।।

तकी ने कहा–तो ठीक है, फिर मैं जो कहूँ, उसे मान लो और दुखी मत होना।

कहे तकी सुलतान सुन, तुझे नहीं कुछ दुख।
जो मैं कहूँ सो मानिए, कर मेरो संतोष।।

बादशाह ने तकी को बहुत समझाया कि उसने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है। अब सोचो, साहिब ने उसका क्या बिगाड़ा था! भाइयो! ऐसे ही पाखण्डी मेरे पीछे भी लगे हुए हैं। हमने ना कहीं इनके सत्संग,

प्रोग्राम में खलल डाली, ना इनसे हमें कोई शत्रुता ही है। हम तो अपनी बात अपने तरीके से समाज तक रखते हुए पाखण्ड से सतर्क कर रहे हैं। पर ये हैं कि हमें सत्संग भी नहीं करने देते हैं। पहले परेड़ ग्राउण्ड, जम्मू में सत्संग होता था, वहाँ भी नहीं करने दिया, फिर सतवारी में 10 हज़ार रुपये देकर होता था, पर वहाँ भी नहीं करने दिया। क्या राजनेता, क्या पुलिस वाले, सब मिले हुए हैं पाखण्डियों से। मैं खुद फौजी रहा हूँ, पर मुझे उन्हें फौजी कहते हुए शर्म आती है, जिन्होंने सतवारी ग्राउण्ड, जम्मू में सत्संग नहीं होने दिया, कहा-हम ध्यान नहीं रख सकते। वाह! क्या फौजी हैं! लानत है। पाखण्डियों की पहुँच बहुत ऊपर तक होती है, पर भक्तो! आप इन पाखण्डियों से बचना और डरके मारे पाखण्ड में ना उलझ जाना।...... तो बादशाह ने बड़ा समझाया, पर तकी न माना।

गंगा की लहर, मेरी टूटी जंजीर

तकी ने साहिब को मरवाने के लिए सबसे पहले उन्हें जंजीरों से बँधवाकर गंगा जी में डलवा दिया, पर गंगा जी की तेज़ धारा से उनका बंधन स्वयं खुल गया और वे आसन लगाकर वहीं बैठ गये। **'गंगा की लहर, मेरी टूटा जंजीर। मृग छाला पर बैठे कबीर।।'** सब हैरान हो गये और साहिब की स्तुति करने लगे।

गंगाजल पर आसन, वंद परे खहराय।
जन कबीर सतनाम बल, निरभय मंगल गाय।।
शाह सिकंदर देखही, अरु ठाढ़े सब लोग।
धनि कबीर सब कोउ कहै, शेखतकी भा सोग।।

यह देख शेखतकी बहुत क्रोधित हुआ, अपना माथा पकड़कर बैठ गया। उसने कहा-कबीर ने कोई जादू किया है, लेकिन अबकी बार

यह नहीं बचेगा, क्योंकि अबकी बार मैं इसे देग में डाल कर आँच दूँगा। यदि इस आँच से बच गया तो इसे अल्ला का नूर समझूँगा।

शेखतकी तब कहै बनाई। अबकी कसनी बचौ न भाई।।
अबकी बार कबीरहि पावो। देगि मूँदि के आँच दिलावो।।
देग आँच ते बचै कबीरा। तो जानौ अल्लाह को नूरा।।

है कबीर पास हमारे, काहि दिलावो आँच

जब साहिब गंगा जी में नहीं डूबे तो तकी ने कहा कि तुमने जादू किया है, पर अब मैं तुम्हें देग में डाल दूँगा; अगर देग की आँच से बच जाओगे तो मानूँगा कि तुम सत्य हो।

अबहि तोहि कीमा करे, देग मूँद देव आँच।
देग आँच से बाँचिहो, तो कबीर तुम साँच।।

तो साहिब को बड़े-से देग में डालकर उसका मुँह बंद कर दिया गया और नीचे लकड़ियाँ रखकर आग लगा दी गयी। शेखतकी देग के कुछ दूर बैठकर तमाशा देखने लगा। इतने में साहिब ने कौतुक किया और देग में से निकलकर बादशाह सिकंदर के पास जा बैठे। बादशाह ने साहिब को देख प्रणाम किया और तकी के पास संदेश भिजवाया कि किसे आँच दे रहे हो, कबीर तो मेरे पास बैठे हैं।

शार सिकंदर पीर पै, खबरि पठाई साँच।
है कबीर पास हमारे, काहि दिलावो आँच।।

तकी को विश्वास न हुआ, उसने देग का मुख खोला तो देखा, खाली था। तकी व्याकुल होकर सिकंदर के पास आया और साहिब को देख कर कहा कि इसे कोई जादू आता है।

आतुर तकी शाह पै आये। हमें देखि पुनि शीश डोलाये।।
बहुरि तकी लज्जित ह्वै कहई। जोलहापै कछु चेटक अहई।।

तब उसने कहा कि अब आग में जलाऊँगा तुम्हें, यदि बच गये तो तुम सच्चे हो।

देग आँच जल बांचेऊ, नहिं व्यापै तन पीर।
बहुरि अग्नि जरि बाचिहौ, तो तुम साँच कबीर।।

दीन्हो अग्नि लगाय

जब साहिब देग की आँच से भी बच गये तो **'शेखतकी बहु काठ मँगाया। अति बिस्तार अंबार लगाया।'** शेखतकी ने बहुत सारी लकड़ियाँ मँगवायी और साहिब को बाँध कर उनके बीच फेंक दिया और आग लगा दी। पर अग्नि बुझ गयी, शांत हो गयी। उसने बहुत प्रयास किया, पर अग्नि नहीं जली।

ताहि बीच मोहिं मूँद के, दीन्हो अग्नि लगाय।
अग्नि धाय बुझानी, जन कबर गुण गाय।।

तकी को तब भी साहिब पर विश्वास नहीं हुआ, कहा–इसने जादू से आग को भी बाँध दिया है। तब उसने कहा कि अब ज़मीन में गड़वा दूँगा, यदि वहाँ से बच गये तो सच्चे फ़कीर हो।

कहै तकी यह बाँध्यो आगी। याको चेटक सब पर लागी।।
तब जानो तुम साँच कबीरा। धरती गाड़े बचे कबीरा।।

किसको गाड़ो कूप

शेखतकी पुनि कूप खुदाये। गर पग बाँधि ताहि में नाये।।

शेखतकी ने एक कुँआ खुदवाया और साहिब को बाँधकर उसमें फेंक दिया और ऊपर से ईंट-पत्थर आदि डलवाकर भर दिया, कुँए का मुँह बंद कर दिया और खुदा से प्रार्थना की कि यह मर जाए।

ईंट पाथर ते भरे, दीनो कूप मुँदाय।
कहै तकी अबकी मरे, ऐसो करे खुदाय।।

साहिब फिर सिकंदर के पास जाकर प्रकट हो गये। सिकंदर ने पुनः तकी को संदेश भेजा कि किसे गाड़ रहे हो, वो तो मेरे पास बैठा है।

कहै सिकंदर पीर सुन, किसको गाड़ो कूप।
सो कबीर इहँ बैठ हैं। अद्भुत ख्याल अनूप।।

हवा में चली तलवार

जब तकी के सब प्रयास विफल हो गये तो क्रुध होकर उसने अपनी तलवार निकाली और साहिब पर वार करने लगा। तलवार हवा में चलती रही, आर-पार हो जाती रही, पर साहिब पर कोई असर न हुआ।

साहिब पर किये गये इन अत्याचारों को पाखण्डियों ने छिपाए रखा और साहिब की छवि को बिगाड़ने के लिए मनगढ़ंत कहानियाँ बना दीं। ऐसे ही साहिब को 52 बार मौत की सज़ा दी गयी, जिसे बावन कसनी या बावन कसौटी भी कहा जाता है। सोचो तो, साहिब ने ऐसा कौन-सा पाप किया था, जो उन्हें इतनी सज़ाएँ दी गयीं! आज हम उन्हीं के नक्शे-कदम पर चल रहे हैं। मंदिरों-गुरुद्वारों में उनकी वाणी गूँज रही है। सच है, यहाँ पर मुर्दों की पूजा ही होती है, जीते-जी उन्हें कोई नहीं पूजता, बाद में ही पछतावा होता है। आपको सुनकर आश्चर्य होगा कि आज संसार में 50 करोड़ से ज़्यादा लोग साहिब की फिलासफी को मान रहे हैं।

हाथी भाग गया

शेखतकी ने साहिब को मरवाने में कोई कसर नहीं छोड़ी। जब आग, पानी, तलवार, तोप आदि से भी साहिब बच गये तो उसने मस्त

हाथी तले कुचलवाने का फैसला किया।

महावत ने मस्त हाथी को शराब पिलायी और लाया। साहिब को बाँध कर गठरी की तरह फेंक दिया गया। साहिब ने कौतुक किया और अपने आसपास दो शेर प्रकट कर दिये, जिसे हाथी ही देख पाया। वो हाथी उलटे पाँव पीछे को भागा। महावत ने बड़ा प्रयास किया, पर वो हाथी ऐसा डरा कि वापिस नहीं मुड़ा।

पानी भरा तोप में

तो जब तलवार से भी काम न बना तो तकी ने तोप से उड़ाने की योजना बनाई। वो हार नहीं मानता था। साहिब के कौतुक को वो जादू समझता था। तो साहिब को बाँध कर खड़ा कर दिया और तोप लायी गयी। जब तोप चलायी तो उसमें से पानी बाहर निकला। तोप में जल-ही-जल भर गया। हरेक महापुरुष को अपने समय में संघर्ष करना पड़ा है, क्योंकि एक सच्चा महात्मा कभी भी पूरी दुनिया को खुश नहीं कर सकता। जब वो पाखण्डियों के ख़िलाफ़ बोलता है तो वे विरोध करते हैं, निन्दा करते हैं। इसलिए जिसकी निंदा नहीं होती, वो महापुरुष नहीं हो सकता, क्योंकि वो दुनिया को खुश करने में लगा हुआ है; वो कोई सुधार नहीं कर सकता। दुनिया तो गंदी धारा में बहे जा रही है और वो भी उन्हें खुश रखते हुए स्वयं भी उसी धारा में बहे जा रहा है। जबकि एक सच्चा महापुरुष दुनिया को अपनी धारा में ले चलता है, इसलिए जिनके हितों को नुक़सान पहुँचता है या जो छल-कपट नहीं छोड़ सकते, वे विरोधी हो जाते हैं और तकी की भांति क्रूर हो उठते हैं।

यह तो कमाल हुआ

बादशाह सिकंदर और शेखतकी साहिब के साथ जा रहे थे, रास्ते में कुछ लोग एक सड़ी-गली लाश को गंगा जी में बहाने जा रहे

थे। तकी ने साहिब से कहा कि यदि तुम परमात्मा के नूर हो तो इस शव को जीवित करके बताओ। सभी उस शव के पास गये। वो एक युवा लड़के का सड़ा-गला शव था। साहिब ने कहा-उठ, कुदरत के कमाल से। वो उसी समय उठकर खड़ा हो गया। यह दृश्य देख बादशाह सिकंदर लोदी के मुँह से अचानक निकल गया-यह तो कमाल हो गया। साहिब ने कहा-तो आज से इसका नाम भी कमाल ही हुआ।

मैं कबीर की बेटी हूँ

जब शेख तकी ने देखा कि साहिब ने तो सड़ी-गली लाश को जीवित कर दिया है, तो कहा-मेरी बेटी कुछ दिन पहले ही मरी है; यदि उसे जीवित कर दोगे, तब मानूँगा। साहिब पुन: बादशाह के साथ तकी की बेटी की कब्र पर आए। तब साहिब ने कहा-उठ, शेख तकी की बेटी! पर वो नहीं उठी। साहिब ने फिर कहा-उठ, तकी की बेटी! पर वो नहीं उठी। फिर साहिब ने कहा-उठ, कबीर की बेटी! वो जीवित हो गयी। तकी बहुत खुश हुआ, कहा-मेरी बेटी। बेटी ने कहा-नहीं! मैं आपकी बेटी नहीं रही, अब मैं कबीर साहिब की बेटी हो गयी हूँ। तब साहिब ने उसका नाम कमाली रखा। वो भी कमाल की भांति साहिब की शिष्या हो गयी।

तो इनकी सत्यता को पाखण्डियों ने छिपा दिया। सभी जानते हैं कि कमाल-कमाली साहिब के बच्चे थे। पर सत्य इससे परे था।

चदरिया झीनी रे झीनी

लोई कहते हैं, भक्ति को। पाखण्डियों ने कहा कि उनकी लोई नाम की स्त्री थी। उन्होंने तो विवाह किया ही नहीं। जब भी कोई उनसे शादी के बारे में पूछता तो वे कहते कि उनका विवाह लोई(भक्ति) से हो चुका है, पर उनकी वास्तव में कोई स्त्री नहीं थी। उन्होंने दूसरों को

भी संदेश दिया–

भग भोगे भग उपजे, भगते बचा ना कोय।
कहैं कबीर भगते बचे, भक्त कहावै सोय।।
नारी पुरुष की स्त्री, पुरुष नारी का पूत।
याही ज्ञान विचार के , छाड़ि चला अवधूत।।

जितने भी आगे संत हुए, उनमें कुछ ही थे, जिन्होंने शादी नहीं की, पर अन्य भी ज्ञान होने पर सन्यासी हो गये। तो जब संतों ने स्त्री नहीं रखी तो साहिब ने क्यों रखनी थी! यह नहीं कि संतों ने स्त्री से घृणा की। नहीं! उन्होंने स्त्री की महानता को समझा, उससे प्रेम किया, पर उनका प्रेम **'शब्द मिलावा होत है , देह मिलावा नाहिं '** वाला प्रेम रहा, वासना वाला नहीं। सच्चे प्रेम में दो आत्माओं का स्पर्श होता है , मिलन होता है , शरीरों का मिलन नहीं होता। शरीरों के मिलन वाला प्रेम माया में फँसा हुआ ही करता है , पर संत माया में नहीं फँसे। **'माया महाठगिनी हम जानी '** में भी उन्होंने साफ़ कह दिया कि सबको ठग लिया। यदि खुद भी किसी स्त्री द्वारा ठगे गये होते तो ऐसा न कहते। तो कुछ ने तो विवाह किया ही नहीं, जबकि कुछ ज्ञान होने पर सन्यासी हो गये। तो साहिब के लिए सोचना भी मूर्खता है ।

चदरिया झीनी रे झीनी।
ज्ञान चदरिया जिसने लीनी, मैली कर धर दीनी।
एक कबीर जतन से लीनी, ज्यों की त्यों धर दीनी।।

उठाओ परदा नहीं है मुर्दा

अंतम कौतुक साहिब ने लाखों लोगों के सामने किया। जब वापिस अपने धाम जाना था तो काशी छोड़ मगहर में आए, क्योंकि एक लोकोक्ति थी कि **'काशी मरे सो मुक्ता, मगहर गदहा होई।'** तो

साहिब ने सोचा कि जाते समय यह वहम भी लोगों के दिल से निकाल देता हूँ।

तो उस दिन लाखों लोग इकट्ठा हुए। काशी के राजा वीरसिंह वघेल और अवध के पठान बिजलीखान के बीच साहिब के पार्थिव शरीर को लेकर झगड़ा हो गया, क्योंकि दोनों साहिब के शरीर का अंतिम संस्कार अपने-2 धर्म के अनुसार करना चाहते थे। बात युद्ध तक आ गयी, कहा-जो जीत गया, वही लेगा साहिब का पार्थिव शरीर। जब दोनों ओर तलवारें खिंच आयी तो इतने में साहिब ने कौतुक किया, अद्भुत शब्द हुआ। अद्भुत प्रकाश हुआ......आकाशवाणी हुई-**'उ ाओ पर्दा, नहीं है मुर्दा। ऐ रे मूर्ख नादाना, तुमने हमको नह ीं पहचाना।।'** जब चादर उठयी गयी तो पार्थिव शरीर नहीं मिला, मात्र कमल के फूल दिख पड़े, जो लोगों ने उनपर चढ़ाये थे। इस तरह जाते समय साहिब अपने विषय में फैलायी गयी सब भ्रांतियों को दूर कर गये। पर बाद में पाखण्डियों ने इस सत्य को भी छिपा दिया। गरीबदास जी ने भी अपनी वाणी में कहा-

काशी तज मगहर चले, किया कबीर पयान।
चादर फूल बिछे ही छाँड़े, शब्दे शब्द समान।।

तो इस तरह साहिब ने बड़े कौतुक किये। वे कोई संत थोड़े थे, वे तो संतों की खानि थे, उन्होंने संतों का सृजन किया। वे स्वयं साहिब ही थे।

शब्द न जानउ गुरु का, पार परऊ कित बार।
ते नर डूबे नानका, जिनका बड़-बड़ ठाट॥

साहिब के चोर

जिस अमर-लोक की बात साहिब ने की है, वो तीन लोक से न्यारा देश है। अमर लोक क्या है ! वो परम-पुरुष, वो सर्वशक्तिमान खुद ही अमर लोक है, इसलिए वहाँ नाश नहीं है। इसका उल्लेख कहीं नहीं मिलता है। 14 लोकों का उल्लेख वेद में है। सात पाताल हैं, फिर उसके ऊपर सात लोक और हैं। गुदा स्थान पर सिद्ध लोक, शिश्न इन्द्री पर ब्रह्म लोक, पेट पर विष्णु लोक, हृदय में शिव लोक, कण्ठ में सरस्वती लोक, त्रिकुटि पर आत्म लोक और सहस्रसार पर निरंजन लोक है। ये सात लोक और सात पाताल मिलाक

14 भुवन कहलाए। पर संतों ने 21 लोक की

ात कही। शून्य में 7 लोक और हैं। शून्य से प

े महाशून्य में सात लोक

और हैं। अचिंत, सोहंग, मूल सुरति, अंकुर, इच्छा, वाणी और सहज लोक। ये महाशून्य की सात सृष्टियाँ हैं। इस तरह 21 ब्रह्माण्ड हैं। संतों ने इनसे परे उस अमर लोक की बात कही। **'सहज शून्य लग प्रलय को अंशा।'** यहाँ तक प्रलय है। **आगे फिर कह रहे हैं। 'सहज पुरुष तक जेतक भाखा, यह रचना परले ते राखा आगे अक्षय लोक है भाई। अमर पुरुष तहाँ आप रहाई।।'** वहाँ तीन लोक वाली नाशनवान

चीज़ें नहीं हैं। बड़ा ही निराला देश है वो।

अवधू बेगम देश हमारा है ।
तहं के गये बहुरि ना आवे, ऐसा देश हमारा है ।

इस तरह साहिब ने अध्यात्म जगत में तहलका मचाया। पूरे ब्रह्माण्ड का विवरण साहिब ने दिया। साहिब की उन्हीं वाणियों की नक़ल विभिन्न मत-मतान्तर कर रहे हैं, पर प्रथम संत-सद्गुरु इसलिए कहा, क्योंकि अमर लोक की बात सबसे पहले उन्होंने की। बाद में फिर 32 संत सद्गुरु हुए, जिन्होंने साहिब का अनुकरण किया। इन 32 संतों के बाद में उनके स्थान पर आने वाले साहिब की मूल शिक्षा भूल गये, निरंजन के दूत बन गये। **'जो रक्षक तहं चीह्नत नाहिं । जो भक्षक तहँ ध्यान लगाहीं ।।'** पूरा संसार परम-पुरुष की भक्ति ना करके काल-पुरुष की भक्ति कर रहा है। काल ने ही आत्मा को भ्रमित किया है, पर लोग भूल गये साहिब की मूल शिक्षा को। बदलाव क्यों आया? क्योंकि संतों के स्थान पर उनके जो रिश्तेदार बगैरह गद्दी पर बैठे, वे मुख्य फ़िलासफ़ी को भूल गये या कुछ समझ नहीं पाए। इस तरह मुख्य तत्व लोप हो गया, उसमें निरंजन की भक्ति का मिश्रण हो गया।

आज भी जब हम कुछ मत-मतान्तरों की तरफ नज़र डालते हैं तो पता चलता है कि वे साहिब की वाणी को, साहिब के शब्दों को भी ले रहे हैं, कुल मिलाकर आख़िर में निराकार की भक्ति कर रहे हैं, निरंजन को मान रहे हैं। इस तरह मिश्रण है। सभी पाँच शब्दों में अटके हैं। इसलिए सभी साहिब के चोर हैं।

जब कोई सिद्ध एक सिद्धि दिखाता है तो दुनिया लट्टू हो जाती है, जब कोई योगी अपनी शक्ति का प्रदर्शन करता है तो दुनिया मोहित हो जाती है, सोचने लगती है कि इसके समान कोई नहीं। पर साहिब ने इनमें से किसी को भी पूर्ण गुरु नहीं कहा। साहिब के अनुसार ये सब कच्चे ही हैं। प्राणायाम, योग ठीक है, पर यदि सोचें कि इससे आत्मा का

कल्याण होगा, तो नहीं हो पायेगा। इसलिए योग से चाहे अष्ट सिद्धियाँ भी प्राप्त कर ले, जल के ऊपर आसन मार ले यानी जल सिद्धि भी आ जाए, मंत्र द्वारा अग्नि को भी प्रकट कर दे यानी अग्नि सिद्धि भी आ जाए, तो भी साहिब कह रहे हैं कि कच्चा ही है।

कभी दुनिया कुछ कौतुक देखकर सोचती है कि पहुँचा हुआ है। नहीं! अभी नहीं पहुँचा है, अटका हुआ है। ब्रह्मादि लोकों की प्राप्ति कर ले, तो भी कच्चा है, क्योंकि काल के दायरे में है। आत्मा का सच्चा रूप नहीं मिला। स्वर्ग में भी सच्चा रूप नहीं मिला। एक भोग लोक है। जैसे नींद में एक शरीर मिलता है। क्या वो नित्य है? नहीं! ऐसे ही स्वर्ग में भी एक शरीर की प्राप्ति होती है जो अनित्य है।

स्वर्ग, ब्रह्म लोक की बात छोड़ो, यदि महाशून्य में पहुँच सोहंग की प्राप्ति भी कर ले, तो भी कच्चा ही है, क्योंकि मन के दायरे में है। यही तथ्य साहिब वाणी में कह रहे हैं।

फिर यदि 10वें द्वार को खोलने का ज्ञान भी आ जाए, जिनका उल्लेख छः योगेश्वरों ने किया, तो भी कच्चा है। जब तब सद्गुरु से अकह नाम की प्राप्ति नहीं करेगा, तब तक पक्का नहीं हो सकता है। बड़ी ग़ज़ब की बात है कि पंच मुद्राएँ साधे, तो भी कच्चा है। ऐसी क्या बात है!

काल खड़ा सिर ऊपरे, काल गहे है केश।
क्या जाने कहाँ मारसी, क्या घर क्या परदेश।।

हरेक के कपाट पर काल पुरुष खड़ा है। हरेक के कपाट पर खड़ा होकर अपना आदेश चला रहा है। **'मन को कोई देख न पाए, नाना नाच नचाए।'** साहिब ने मन पर बहुत कहा, क्योंकि इसी ने आत्मा को बंधन में डाला है। साहिब वाणी में कह रहे हैं–**'तेरा बैरी कोई नहीं, तेरा बैरी मन।'** बड़ी-2 सिद्धि-शक्तियाँ आने के बाद भी आदमी कच्चा क्यों है! क्योंकि तीन-लोक में यम का राज है। मन

के पिंजड़े में कैद है आत्मा।

सुषम्न मध्ये बसे निरंजन, मूँधा दसवाँ द्वारा।
उसके ऊपर मकर तार है, चढ़ो सम्हार सम्हारा।।

यहीं पर मन है। इतनी ऊँचाई पर बैठ पूरी दुनिया को नचा रहा है। जैसी-2 मन की हकूमत है, वैसा-2 सबको करना पड़ता है। नेटवर्क बड़ा ख़तरनाक है। सच में, शीश के ऊपर खड़ा है। जब भी, जो भी चाहता है, इंसान से करवा लेता है। जितनी भी इच्छाएँ हैं, आत्मा की नहीं हैं। आदमी इच्छाओं की पूर्ति के लिए ही कर्म कर रहा है। बुद्धि मन की इच्छाओं की विवेचना करती है। इसी में मित्र-शत्रु का भास होता है। यह बुद्धि बहुत बड़ी शत्रु है। चित्त भी बड़ा शक्तिशाली है। चित्त अपनी क्रियाएँ किये जाता है। आप चाहें, ना चाहें, आपकी स्मृति में कई बातें आती जाती रहती हैं। आपकी चेतना के पटल पर लाकर पटकता है।

कुछ बातें, जिन्हें आप याद भी नहीं करना चाहते, पर आ जाती हैं याद। रात-दिन इन्हीं में आदमी खोया है। यह मन है। शरीर का रोम-रोम इसके अधीन है। देखो, राजा है कि नहीं। उदास करना चाहता है तो उदास कर देता है। जितने भी संकल्प-विकल्प हैं, उनका प्रभाव आत्मा पर पड़ रहा है।

चार अंतःकरण के, संग आत्मा ख़राब।
जैसे नीच प्रसंग से, ब्राह्मण पिये शराब।।

तो आज भी नाना मत-मतान्तर साहिब की वाणी लेकर निरंजन की भक्ति किये जा रहे हैं। साहिब तो बड़ी ऊँची बात बोल रहे हैं। मुझे आश्चर्य होता है कि सब साहिब की वाणियाँ ले रहे हैं, पर ले रहे हैं केवल सुविधा के अनुसार। जैसे एक भिखारी दोहा गा रहा था-

दान दिये धन ना घटे, नदी ना घटे नीर।

अपनी आँखों देख लो, कह गये संत कबीर।।

मैंने चुपके से एक बात की, कहा–क्या आपने यह दोहा भी सुना है कि–

माँगन मरण समान है, मति कोई माँगो भीख।
माँगण ते मरना भला, यह सतगुरु की सीख।।

पर वो यह दोहा क्यों बोले! फिर तो अपने मुँह पर ही तमाचा मारना है। मुझे उससे कोई मतलब नहीं, पर विचार करो कि साहिब जो कह रहे हैं, वो कुछ और है।

तीन लोक की बात लोग साहिब की वाणी लेकर स्थापित कर रहे हैं। सगुण–भक्ति को लोग साहिब की वाणी लेकर स्थापित कर रहे हैं। निर्गुण–भक्ति वाले भी अपनी बात को साहिब की वाणी लेकर स्थापित कर रहे हैं। मूर्ति पूजा तक को लोग साहिब की वाणी लेकर स्थापित कर देते हैं। पर साहिब ने इन सबसे परे की बात की है। इसलिए वास्तव में ये सब साहिब के चोर हैं, जो उनकी वाणी को तोड़–मरोड़ कर अपनी सुविधा अनुसार प्रस्तुत करते हैं। हाँ! चोर हैं सब–के–सब।

एक आदमी मुझसे गोष्ठी करने आया, कहा कि धुनें ही सब कुछ हैं। मैंने कहा–नहीं। वो साहिब की वाणी का हवाला देने लगा–

रस गगन गुफा में अझर झरै।
बिन बाजा झनकार उठै जहँ, समुझि परै जब ध्यान धरै।।

मैंने कहा–अरे भाई! अनहद धुनों को साहिब ने नकारा थोड़े है, पर प्रमात्मा तो कहा ही नहीं। इन धुनों में आनन्द भी है, प्रकाश भी है, पर साहिब ने कहीं आगे की बात की है। तो साहिब की वाणी का हवाला देकर इन धुनों को परमात्मा कहने वाले उस भिखारी की तरह साहिब के चोर ही तो हैं जो अपनी सहूलियत के अनुसार साहिब की वाणी को ले रहे हैं। देखो, कितना स्पष्ट कह रहे हैं–

जाप मरे अजपा मरे , अनहद भी मर जाय।
सुरति समानी शब्द में, वाको काल ना खाय।।

देखो, साहिब किसी और शब्द की ओर संकेत कर रहे हैं। **'सो तो शब्द विदेह। जिभ्या पर आवे नहीं, निरखि परखि कर लेह।।'** एक अन्य स्थान पर भी कह रहे हैं–

सो सद्‌गुरु मोहि भावै, जो नयनन अलख लखावै।
डोलत डिगे न बोलत बिसरे , जब उपदेश दृढ़ावै।
प्राण पूज्य किरिया से न्यारा, सहज समाधि सिखावै।
द्वार न रूँधे पवन न रोके, नहिं अनहद अरुझावै।।....

'नहिं अनहद अरुझावै।' तो स्पष्ट ही तो कह रहे हैं कि ऐसा गुरु अच्छा लगता है जो अनहद धुनों में नहीं उलझाता। तो फिर साहिब की वाणी लेकर इन धुनों को स्थापित करने वाले साहिब के चोर हुए कि नहीं! पक्का।

आवाज़ दो चीज़ों के टकराने से ही उत्पन्न होती है। तो अनेक तरह के शब्द हैं। ब्रह्मानंद जी भी कह रहे हैं–

अनहद की धुन प्यारी संतो, अनहद की धुन प्यारी।
पहले पहले रिलमिल बाजे, पीछे न्यारी न्यारी रे ।।

पहले धीरे-2 होती है, फिर इतनी तेज़ होती हैं कि पूछो मत। इस ब्रह्माण्ड में इतना धमाका किसी भी चीज़ का नहीं हो सकता है। पसीना तक छूट जाता है। जैसे मंथानी से दही मथते हैं तो मक्खन ऊपर आ जाता है, ऐसे ही वे धुनें आपके वजूद को ऊपर खींचेंगी, आपको लगेका कि धुनें वजूद मिटा रही हैं। कभी-2 कुछ लोग आकर कहते हैं कि साहिब भी कह रहे हैं–

रस गगन गुफा में अजर झरै ।
बिन बाजा झनकार उठै जहँ, समुझि परै जब ध्यान धरै ।।

और पलटू साहिब भी कह रहे हैं–

उलटा कूँवा गगन में, तिसमें जरे चिराग़।
तिसमें जरै चिराग़, बिन रोगन बिन बाती।।
छः ऋतु बारह मास, रहत जरतै दिन राती।।
सतगुरु मिला जो होय, ताहि की नज़र में आवै।
बिन सद्गुरु कोउ होय, नहीं वाको दरसावै।।
निकसै एक आवाज़, चिराग़ की जोतहिं माहीं।
ज्ञान समाधी सुनै, और कोउ सुनता नाहीं।।
पलटू जो कोई सुनै, ताके पूरन भाग।
उलटा कूवा गगन में, तिसमें जरै चिराग़।।

अब एक अच्छा आदमी है तो कहा कि अच्छा है, पर यह थोड़े मतलब कि पहुँचा हुआ है। इस तरह ये चीज़ें हैं, इन्हें बुरा थोड़े कहा। इन धुनों में एक लाजवाब धुन है, जो हॉलीकाप्टर की तरह होती है। धूँ-धूँ की आवाज़ होती है। वो आपको चुंबक की तरह ले जाती है–बहुत दूर तक। यह शून्य के पार से आती है।

तो इस तरह हर जगह साहिब की वाणी की चोरी की गयी। तभी तो उलझने पैदा हुई। लोग भ्रमित हुए। एक प्रोफेसर भी पढ़ पढ़कर बता रहा है।

एक देहाती मुंबई गया। गाँव के लोग उससे पूछने आने लगे कि कैसा है मुंबई! उसका छोटा भाई किसी को वहाँ तक पहुँचने ही न दे, खुद ही सुना हुआ हाल बता दे। तो आख़िर उसने तंग आकर कहा–

मैं आया मुंबई से, ख़बर कहे मोरा भाई।

तो दुनिया के लोग अंदर में नहीं गये, पर हाल ऐसा बतायेंगे, जैसे उनसे अधिक, उनसे ऊपर कोई गया ही ना हो।

साहिब ने पूरे ब्रह्माण्ड का विवरण दिया। आपके शरीर में सात

चक्र हैं। 49 करोड़ योजन की यह काया है। 7 करोड़ योजन एक-से-एक चक्र की दूरी है। आगे भी बहुत दूरियों पर देश हैं। एक किताब में यह दूरी पढ़ीं। कहीं उसने गड़बड़ कर दी थी। नक़ल साहिब की करने की कोशिश की, पर नक़ल के लिए भी अकल चाहिए। साहिब की वाणी चुरा लेने से सत्य को नहीं जाना जा सकेगा। उनके दोहों को गाकर भक्ति निरंजन की करोगे तो तीन-लोक में मार खा जाओगे, ना यहाँ के रहोगे, ना वहाँ के।

कबीर का गाया गायेगा, तो तीन लोक में मार खायेगा।
कबीर का गाया बूझेगा, तो अंतर गत को सूझेगा।।

कुछ पंच मुद्राओं में से किसी की बात करते हुए साहिब की वाणी का हवाला दे रहे हैं। कोई चाचरी मुद्रा से ध्यान कर रहा है और साहिब की वाणी का हवाला दे रहा है। इस तरह कोई भृकुटि में ध्यान रोक रहा है, कोई भूचरी मुद्रा से लगा हुआ है, कोई अगोचरी मुद्रा से ध्यान कर रहा है, कोई उनमुनि मुद्रा से लगा हुआ है तो कुछ खेचरी मुद्रा द्वारा 10वें द्वार को खोलकर ब्रह्माण्ड में जा रहा है। ये सब भी साहिब की वाणी को चुराकर अपना-2 मत स्थापित करने में लगे हुए हैं। पर साहिब ने तो स्पष्ट आगे की बात की है। देखो, इन चोरों की कैसे पोल खोल रहे हैं-

सिद्ध साध त्रिदेवादि ले, पाँच शब्द में अटके।
मुद्रा साध रहे घट भीतर, फिर औंधे मुँह लटके।।

औंधे मुँह लटकने का मतलब है कि माँ के पेट में जन्म लेंगे। इसलिए साहिब ने कहीं आगे की बात की है-

पाँच शब्द और पाँचों मुद्रा, वह निश्चय कर माना।
उसके आगे पुरुष पुरातन, उसकी ख़बर ना जाना।।
उसके आगे भेद हमारा, जानेगा कोई जाननहारा।
कहैं कबीर जानेगा वोही, जा पर कृपा सतगुरु की होई।।

देखो, उस सत्य को जानने के लिए सद्गुरु की कृपा का महत्व बोल रहे हैं। तो कुछ कमाई करने को कहते हैं। कुछ क्या, सभी यही कहते हैं कि जितना ध्यान करोगे, उतना ही ऊपर उठ पाओगे, उतनी ही शक्तियाँ आयेंगी। जितने पुण्य कमाओगे, उतना लाभ मिलेगा। यानी सभी अपनी ताक़त से छूटने के लिए कह रहे हैं। पर साहिब देखो, निराली बात कह रहे हैं-

बहु बंधन ते बांधिया, एक विचारा जीव।
की छूटे बल आपने, जो ना छुड़ावे पीव।।

देखो, न्यायालय अखबार को साक्षी नहीं मानता है, वो विड़ियो रिकार्डिंग को भी साक्षी नहीं मानता। क्योंकि काट-कूट कर शब्द जोड़े जा सकते हैं। बात का बतंगड़ बनाया जा सकता है। इस तरह साहिब की वाणी को विभिन्न मत-मतान्तरों, पंथों ने तोड़ मरोड़ कर, काट-कूट कर ऐसे दर्शाया है जिससे उनका मतलब सिद्ध हो सके। मेरे भी शब्दों का अनर्थ करके बताया जा सकता है। ऐसे ही सभी अपनी-2 सुविधा अनुसार साहिब की वाणी लेकर काल-पुरुष की भक्ति तक केन्द्रित कर दिया दुनिया को। इतने गलत तरीके से साहिब की वाणी ली गयी है कि कुछ कहते नहीं बनता। 10वें द्वार की बात तो साहिब ने भी की, कहा-

साधु सोई जो यह घट लीन्हा
नौ दरवाजे परगट चीन्हा
दसवें जाय खोल जिन लीन्हा
तहाँ कुल गोत्र हमारा है
कर नैनों दीदार महल में प्यारा है।

पर इसके आगे की बात भी कह रहे हैं, 11वें द्वार की बात भी कर रहे हैं। यानी 10वें द्वार को पराकाष्ठा नहीं कह रहे।

नौ द्वारे संसार सब, दसवें योगी साध।

एकादश खिड़ की बनी, जानत संत सुजान।।

11वें द्वार का रहस्य महापुरुष जानते हैं। 10वाँ खुल जाएगा तो भी माया से बाहर नहीं जा सकते हैं, काल-पुरुष से बाहर नहीं जा सकते हैं। साहिब ने कई जगहों पर 11वें द्वार का उल्लेख किया। पर साहिब के चोर तो साहिब की वाणी चुराकर 10वें द्वार को अंतिम बिंदु स्थापित करने में लगे हुए हैं। साहिब वाणी में साफ कह रहे हैं-

दसवें द्वार ते न्यारा द्वारा। ताका भेद कहूँ मैं सारा।।

दसवें द्वार से आत्मा कभी अमर लोक में नहीं पहुँच सकती है। कुछ साहिब की नक़ल करते हुए यूँ ही अमर-लोक, सच खण्ड कहे जा रहे हैं, पर फिर आकर दसवें द्वार में अटक रहे हैं। जिस रास्ते से जायेंगे, वहीं पहुँचेंगे। मौत के समय भी ऐसा ही होता है, जहाँ से प्राण निकलते हैं, वहीं पहुंचता है जीव। इस पर साहिब ने कहा-'**अंत समय जब जिव का आवै। यथा कर्म तब देही पावै।।**' अंत समय आता है तो अपने कर्मानुसार ही जीव दूसरा शरीर धारण करता है। कह रहे हैं-'**हे ठ द्वार से प्राण निकाशा, नरक खानि में पावै बासा।।**' मौत के समय यदि प्राण मल द्वार से निकल जायेंगे तो जीव सीधा जाकर नरक में पहुँच जायेगा। उसकी पहचान है कि मल बाहर आ गया होगा। क्योंकि जब नरक में जाना होता है तो यमदूत लेने आते हैं। ऐसे में डर के मारे मनुष्य का मल बाहर आ जाता है।

मरने वाला पता छोड़ जाता है कि कहाँ गया हूँ। जैसे खुदकुशी करने वाला संदेश लिख जाता है कि क्यों कर रहा हूँ। इस तरह मरने वाला बता कर जाता है। जानकारी नहीं है तो पता नहीं चलता है कि कहाँ गया है। आप कब मरेंगे, आप जान सकते हैं। आप सूर्य की तरफ एक मिनट देखकर नीचे देखना। अगर आपको अपनी छाया बिना मस्तक की दिखे तो समझ लेना छः महीने के मेहमान हो। यदि आपकी जीभ मोटी हो जाए और दाँत भी गीले र

ें तो भी समझ लेना, छः महीने के मेहमान हो। जिसे नीले रंग की मक्खी यदि लगातार घेर रही हो तो समझो महीना-भर जीवन शेष है। जिसे दोपहर को टूटते तारे और रात को इन्द्रधनुष दिखने लगे, वो भी छः महीने तक ही जीवित रहता है। आपकी दो नाड़ियाँ हैं-इड़ा और पिंगला। ये दोनों स्वर पौन-2 घण्टा चलते हैं। पर जब एक ही स्वर 20 दिन तक लगातार चलता रहे, दूसरा बंद हो जाए तो समझो छः महीने में मौत होगी। इस तरह आप दिन भी जान सकते हैं कि कब जाना है। कुछ कहते हैं कि पता नहीं, कब जाना है। नहीं, आप जान सकते हैं। तो मरने वाला पता बता के जाता है कि यहाँ जा रहा हूँ। आपके घर पुलिस वाला आ जाता है तो भय होता है। तो यमदूत उस समय आते हैं, जब नरक ले जाना होता है। तब भय लगता है, मल बाहर आ जाता है। दूसरी ओर देवदूत विमान लेकर तब आते हैं, जब स्वर्ग में जाना होता है। उस मृतक का चेहरा प्रसन्नचित्त मुद्रा में होगा, क्योंकि तब स्वर्ग से देवदूत लेने आते हैं। आपके चेहरे पर, आँखों पर आपका भाव झलकता है। अगर आप दुखी हैं, चाहे आप कितनी भी बनावटी हँसी हँसें, पर वो भाव आपकी आँखों से, आपके चेहरे से पता चलता है। इस तरह मरने वाला छोड़कर जाता है अपनी पहचान। तो आगे कह रहे हैं-**'नाभि द्वार से जीव जब जाई। जलचर योनि में प्रकटाई।।'** यदि मरते समय प्राण मूत्र द्वार से निकल जायेंगे तो वो जलचर जोनि में जन्म लेगा। उसकी पहचान है कि तब मूत्र बाहर आ जायेगा। इसी शब्द में आगे कह रहे हैं-

दशमें द्वार से जिव जब जाई। स्वर्ग लोक में वासा पाई।।
राजा होय के जग में आई। भोगे भोग बहु विधि भाई।।

कह रहे हैं कि यदि मरते समय प्राण दसमें द्वार से निकल जायेंगे तो स्वर्ग में वास पा लेगा या फिर राजा बनकर संसार में आयेगा। देखो, अब अंत में साहिब 11वें द्वार को ही अमर लोक का रास्ता बता रह हैं-

11वें द्वार से जीव जब जाता। परम पुरुष के लोक समाता।।
बहुरि ना इस भवसागर आता। फिर-फिर नाहिं गर्भहि समाता।।

11वें द्वार से निकलकर आत्मा उस अमर लोक में चली जाती है, जहाँ से फिर लौटना नहीं होता। गर्भ में बड़े-2 ऋषि-मुनियों, देवताओं, त्रिदेव आदि की तरह आकर औंधे मुँह लटकने की सज़ा ख़त्म हो जाती है, उससे सदा के लिए छुटकारा मिल जाता है।

दसवाँ द्वार सुषुम्ना के अंदर है जबकि 11वाँ द्वार सुरति के अंदर है। लोग साहिब की वाणी लेकर 10वें द्वार को स्थापित कर रहे हैं, पर देखो, साहिब स्पष्ट 11वें द्वार की बात कर रहे हैं। बात तो साहिब ने 10वें की भी की है, पर उसे पराकाष्ठा नहीं कहा। साहिब ने सबकी बात करके फिर उस देश का रहस्य दिया।

इस तरह साहिब ने जिस नाम की बात की, उसे भौतिक नाम समझ लिया गया। ये बहुत बड़े चोर हैं साहिब के ; हर चीज़ को चुराकर मिलावट कर दी। जैसे हम रैलियाँ निकालते हैं, पाखण्डी भी हमारी नक़ल कर रहे हैं। हमारा **'सत्य'** पाखण्डियों ने चुरा लिया है, **'साहिब'** भी कुछ-2 लिख रहे हैं। **'सद्गुरुवेनमः'** भी ले लिया है। मुझे लगता है कि एक दिन अचानक **'साहिब बंदगी'** बोल कर कह देंगे कि हम ही असली साहिब हैं। तब कुरता-पायजामा भी मेरी तरह पहनेंगे। ऐसे ही तो आज सभी संत बनकर बैठे हुए हैं। जैसे बरसात में कुकुरमुत्ते निकल आते हैं, भीड़ कर देते हैं, ऐसे ही तो ये कर रहे हैं। पर थोड़ी देर बाद में नहीं मिलते। इसी तरह ये अभी थोड़ी उछल-कूद कर रहे हैं। जैसे एक सिंह होता है, वो हिरण का शिकार करता है तो उसे ऐसे नहीं मारता। चाहे तो जल्दी पकड़ ले; पर नहीं, वो उसे दौड़ा-2 कर मारता है।

मैं भी इन्हें दौड़ा-2 कर मारना चाहता हूँ। हमारी नकल करते हुए पीछे-2 आ रहे हैं अभी। यदि मैं मंज पर किसी को बिठाकर चलूँगा तो ये भी ऐसा ही करेंगे। लेकिन जल्दी ही इनकी बस हो जाती है, क्योंकि इनके लोग हमारी तरह पक्के नहीं हैं। एक यात्रा करते हैं तो बस हो जाती है।

तो साहिब के चोरों ने भी उनकी नकल करके अपने को संत बनाने का प्रयास किया। ये चोर साहिब की वाणी को अपने स्वार्थ पूर्ति के हेतु चुराकर कह रहे हैं कि हम भी संत हैं। साहिब तीन लोक से परे देश की बात कह रहे हैं, पर तीन लोक को स्थापित करने वाले कह रहे हैं कि साहिब कह रहे हैं कि शुभ कर्म करो, चलो स्वर्ग में। नहीं! साहिब साफ़ कह रहे हैं–**'पाप पुण्य ये दोनों बेड़ी। इक लोहा इक कंचन केरी।'** कुल मिलाकर कह रहे हैं कि **'सैयाद के काबू में हैं सब जीव विचारे।'**

चल हंसा सतलोक, छोड़ो यह संसारा।
यह संसार काल है राजा, कर्म का जाल पसारा।।

तो इस तरह **'नाम' भी साहिब ने विदेह कहा।** बावन अक्षर की सीमा वाला नाम स्थापित नहीं किया। वहाँ तक तो काल का दायरा है। साहिब ने जिस नाम की बात की, वो मन की सीमा से परे है।

निःअक्षर का भेद, सतगुरु दे दयाल।
बावन से बाहर करे, तब शिष्य होय निहाल।।

जब नाम मिलेगा तो 24 घण्टे वो ताक़त रहेगी। आगे कह रहे हैं–**'जहँ लग नाम कहने पड़ा, सो सब माया जान।'** वास्तव में बावन नाम की उत्पत्ति सप्त स्वरों से है। ये सप्त स्वर सप्त चक्रों से उत्पन्न हो रहे हैं यानी बावन की उत्पत्ति काया से है।

1–मूलाधार चक्र–देवलोक गुदा स्थान वहाँ **गणेश देवता** माना है, **व, श, ष, स,** ये चारौ अक्षर इन्द्री से प्रकटे हैं इसी से चतुर दल कमल और छः सौ स्वासों का जाप माना है।

2–चक्र ब्रह्म लोग–पेडू स्थान में नाभी के छः अंगुल तरे प्रमान के वहां ब्रह्मा देवता माना है, **व, भ, म, य, र, ल** ये छः अक्षर इन्ही से प्रगटे हैं इसी से छः दलों का कमल छः हज़ार स्वासों का जाप माना है।

3–मणि पूरक चक्र–बकुन्ठ लोक नाभी स्थान में मान के वहाँ बिष्णु देवता माना है, **ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ,** ये दस अक्षर इन्हीं से प्रकटे हैं सोई दस दलका कमल है। छः हज़ार स्वांसों का जाप माना है।

4–नअहद चक्र–कैलाश लोक हृदय स्थान में मान के वहाँ महादेव देवता माना है, **क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ** ये वारह अक्षर हैं इन्हीं से प्रगटे हैं सोई द्वादश दल का कमल और छः हज़ार स्वांसों का जाप माना है।

5–विशुद्ध चक्र–सत्य लोक कण्ठ स्थान में मान के वहाँ शारदा देवी मानी है वहाँ **अ से अः** तक सोहन स्वर प्रगटे हैं सोई **षोड़स** दल का कमल और एक हजार स्वाँसों का जाप माना है।

6–अग्नि चक्र त्रिकुटी–दोनों भोंह के बींच का स्थान वहाँ महाविष्णु देवता माना है, **ह, क्ष,** ये दो अक्षर इन्हीं से प्रकटे हैं सोई दो दल कमल और एक हजार स्वांसों का जाप माना है।

7–सहस्त्र दल कमल भंवर गुफा–दशम् द्वार ब्रह्माण्ड स्थान में मान के वहां परम तत्व परमात्मा ओंकार देवता माना है, ओंकार रूप ब्रह्म ज्ञान की उत्पत्ति यहां से होती है इस हेतु सहस्त्र दल कमल मान के एक हजार स्वासों का जाप माना है।

तो इस तरह शरीर के इन चक्रों से बावन नाम की उत्पत्ति होती है, पर वो विदेह नाम यहाँ से उत्पन्न नहीं होता है। इस पर कह रहे हैं– **'बावन से बाहर करे, जब मिले गुरु पूरा।'** बावन तक माया है, पर वो इनमें नहीं आता। वो तो लिखने में नहीं आता। **'लिखा न जाई, पढ़ा न जाई।'** यह ध्यान का विषय है, यानी सुरति द्वारा गुरु आपको प्रदान करता है। यह परम चेतन है, बड़ा अनूठा है। किसी को इस नाम का भेद नहीं मिला। इसलिए सब काल–पुरुष की भक्ति में काया के नाम अथवा देही के अन्दर वाले नाम में उलझ गये, और नाम जपने लग गये।

सिद्ध साध पच मुए, पड़े काल के फेर।

निःअक्षर जाने बिना, भये काल के चेर।।

'गोरख अटके काल पुर, कौन कहावे सार।' गोरख आदि भी काल तक अटक गये, सच्चे नाम को नहीं जान पाए। इतना ही नहीं–

धरती करते एक पग, समुंद्र करते फाल।
हाथों परबत तौलते, ते भी खाए काल।।

पूरी धरती को एक कदम में नाप लेने वाले बामन अवतार थे। समुद्र को लाँघने वाले हनुमान जी थे। हाथ से परवत उठाने वाले भी हनुमान जी और कृष्ण जी थे। पर काल किसी को नहीं छोड़ता है। पर **'एक कबीरा ना मुआ, जेहि के नाम आधार।'** वो ठीक कह रहे हैं, उन्होंने शरीर छोड़ा ही नहीं। नहीं मरे। फूल पर आए थे, फूल ही छोड़ गये। वे न जन्में थे, न मरे। तो कहा–**'सार शब्द जाना नहीं, धोखे जन्म गँवाय।'** सार शब्द क्या है? **'सार शब्द सतपुरुष कहाया।'** वो है नाम। प्रत्येक नामी को लगता होगा कि एक बहुत बड़ी ताक़त उसके साथ काम कर रही है। यह है नाम। इस नाम को पाकर कमाई करने की ज़रूरत थोड़े पड़ेगी। **'मेरा हरि मोको भजे, मैं सोऊँ पाँव पसार।'** वाली बात हो जायेगी। साहिब की वाणी का ह्रास किया। सगुण वालों ने भी तोड़ मरोड़ दिया। निर्गुण वालों ने उनकी वाणी को ऐसे प्रस्तुत किया, मानो साहिब निर्गुण भक्त ही कह रहे हैं। साहिब ने कहा–

तू नाम सुमर जग लड़ने दे।

सगुण वालों ने बना दिया–

तू राम सुमर जग लड़ने दे।

कहीं हम साहिब की फोटो देखते हैं तो उसमें उन्होंने माला पहनी है, तिलक लगाया है। यह तो बाद में लोगों ने अपनी कल्पना अनुसार बनाया। उन्होंने कोई अलंकरण धारण नहीं किया। उन्होंने तो स्पष्ट कहा–

माला फेरत युग भया, फिरा ना मन का फेर।
कर का मनका डारि दे, मन का मनका फेर।।

तो योगियों ने भी उनके साहित्य को तोड़कर इस तरह दिखाया कि जैसे उन्होंने निराकार की उपासना की हो। साहिब साफ़ कह रहे हैं– **'निराकार मन ही को जानो।'** फिर कह रहे हैं–

मन ही सरूपी देव निरंजन, तोहि रहा भरमाई।
हे हंसा तू अमर लोक का, पड़ा काल बस आई।।

साहिब कह रहे हैं कि निराकार ने आत्मा को शरीर के पिंजड़े में फँसा दिया है और योगी निराकार की भक्ति बोल रहे हैं। **'माया महाठगिनि हम जानी'** में भी उन्होंने साफ़ कह दिया कि सबको ठग लिया। योगियों को भी नहीं छोड़ा।

ज्ञान चदरिया जिसने लीनी, मैली कर धर दीनी।
एक कबीर जतन से लीनी, ज्यों की त्यों धर दीनी।।
चदरिया झीनी रे झीनी॥

चोरों ने चोरी बड़े प्यारे तरीके से की। आदमी समझने लगा, शायद यही बोल रहे हैं साहिब। रामायण में भी आता है कि–

उलटा जाप जपा जब जाना।
बाल्मीकि भये ब्रह्म समाना।।

लोगों ने अर्थ का अनर्थ बना दिया, कहा–**'उलटा जपा, मरा-मरा जपा।'** वाह! यहाँ सीधा जपने से काम नहीं चल रहा है तो उलटा जप कर ब्रह्म समान हो गये।

जब मैं पूछता हूँ कि मरा-मरा क्यों जपा, तो जवाब मिलता है कि वाल्मीकि जी ने इतने पाप किये थे कि उनके मुख से राम नहीं निकल रहा था। यदि ऐसी बात है तो कलयुग में तो बड़े-2 महापापी लोग हैं, कई-2 ख़ून किये हैं, कई-2 बलात्कार किये हैं, यदि उन्हें भी कहा जाए

कि राम बोलो तो मेरे विचार से उन्हें भी कोई दिक्कत नहीं आयेगी। रावण का तो पुतला तक जलाया जाता है, क्योंकि दुष्ट था, पापी था। वो राम जी से युद्ध करते समय उन्हें राम कहकर ही बुलाता था। ना बाल्मीकि रामायण में लिखा है कि वो युद्ध करते समय या किसी से बात करते समय उन्हें मरा-2 कहकर बुलाता था और ना गोस्वामी जी ने रामचरित मानस में कहीं ऐसा लिखा है। जब महापापी के मुख से भी राम निकल सकता है तो बाल्मीकि जी कोई राक्षस भी नहीं थे। फिर ऐसी क्या स्थिति हो गयी थी कि उसके मुख से राम नहीं निकला। वास्तविकता यह थी कि बाल्मीकि जी ने अष्टम चक्र की ओर उलटी स्वाँसा चलायी थी। सच यह था। साहिब ने इस स्थिति को कहा-

पवन को पलट कर, शून्य में घर किया,
धर औ अधर में भरपूर देखा।
कहैं कबीर गुरु पूरे की मेहर से,
त्रिकुटि मध्य दीदार देखा।।

दरिया साहिब भी कह रहे हैं-

चढ़ि गई चाँप चली ज्यों धारा,
ज्यों मकरी मुख तारा।
मैं मिलि जाय पाय पिया प्यारा,
ज्यों सलिला जलधारा।।

देखो, सूरदास जी भी इस स्थिति को कितने प्यारे तरीके से बोल रहे हैं-

मुरली धुन गाजा, सूर सुरति सर साजा।
फोड़ि आकाश अलल पछ भाजा, उलटि के आपु समाजा।।

लोगों को जानकारी नहीं है, अंतर जगत की ख़बर नहीं है, मनमाने तरीके से अर्थ लगाए। महात्मा ही महात्मा की बात समझ सकता

है। साहिब ने तभी तो कहा–

तेरा मेरा मनुआँ, कैसे इक होई रे ।
मैं कहता हौं आँखिन देखी, तू कहता कागद की लेखी।
मैं कहता सुरझावन हारी, तू राख्यो उरझाई रे.........।।

कहा–तेरा–मेरा मन एक नहीं हो सकता। मैं आँखों देखी बात कहता हूँ और तू है कि पोथियों में पढ़कर कह रहा है। फिर मैं बात को सुलझाने का प्रयास कर रहा हूँ, पर तू उलझाए जा रहा है, इसलिए तेरा–मेरा मन एक कैसे हो सकता है !

साहिब ने जो कुछ कहा, लोगों ने तोड़–मरोड़ कर अपनी सुविधा अनुसार कुछ और कर दिया। चाहे कोई काले भूत की उपासना कर रहा है, साहिब के दोहे वो भी बोल रहा है। वो भी कहेगा कि साहिब भूत की भक्ति करने को कह रहे हैं।

.... बाल्मीकि ने क्या किया था, इसे थोड़ा समझते हैं। मैं मोटे तौर पर बता दूँगा। दवा पर लिखा है कि डॉ० की राय के बिना ना लें। वो सेहत के लिए हानिकारक है। इस तरह अंदर में गुरु के बिना नहीं जाना है। जरूरत पड़ेगी गुरु की। आप अपने बच्चों को पढ़ाना चाहते हैं तो अच्छा अध्यापक ढूँढ़ते हैं, घर बनवाना है तो अच्छा मिस्त्री ढूँढ़ते हैं, पेंट करवाना है तो अच्छा पेंटर देखते हैं। अच्छे–2 ही तो ढूँढ़ रहे हैं। तो भाई! अंदर की दुनिया में जाने के लिए अच्छे दर्शक की ज़रूरत पड़ेगी कि नहीं।**'बिन सतगुरु पावे नहीं........।'**

तो अंदर की दुनिया में जाने के लिए इड़ा–पिंगला को लय करना होता है।**'इड़ा के घर पिंगला जाई।'** एक समय में एक नाड़ी चलती है। जब बाईं नाड़ी चल रही है और ध्यान किया तो नींद आ जायेगी, क्योंकि यह चन्द्र नाड़ी है, शीतल है। जब दाई नाड़ी चलेगी तो आपको आकुलाहट होगी और आप उठकर चल पड़ेंगे। क्योंकि यह सूर्य नाड़ी है, गर्म है। बड़ी मुसीबत है फिर। परम तत्व का रास्ता बारीक है। आग

और पानी के बीच में से जाना है। जब तक सुषुम्ना नहीं खुलेगी, नहीं जा सकते हैं। बिना सोए स्वप्न नहीं देख पायेंगे। इस तरह सुषुम्ना खोले बिना नहीं जा पायेंगे अंदर में। कुम्भक-रेचक क्रिया नहीं बता रहा हूँ, योग का खण्डन भी नहीं कर रहा हूँ, पर उससे कल्याण नहीं होगा। तो इड़ा-पिंगला पौन-2 घण्टा बारी-2 चलती है। जब पिंगला नाड़ी चलेगी तो आप जल्दी-2 काम करेंगे......सूर्य नाड़ी है। आपको जैसे-2 अंदर से घुमाया जा रहा है, वैसे ही आप हो रहे हैं। अष्टदल कमल पर मन के घूमने के साथ-2 आपका स्वभाव भी बदलता जाता है।

पाँच तत्व शरीर में हैं। जब जल तत्व चलेगा तो आपका स्वभाव शीतल रहेगा, जब वायु तत्व चलेगा तो आपमें लालच का भाव आयेगा, जब अग्नि तत्व चलेगा तो जोश में आ जायेंगे, जब पृथ्वी तत्व चलेगा तो गंभीर हो जायेंगे और जब आकाश तत्व चलेगा तो ज्ञान की स्थिति होगी। कभी अग्नि तत्व ऊपर आ जाता है तो कभी वायु तत्व। इसके अनुसार चलता है स्वभाव। इसको कोई वैज्ञानिक नहीं जानता है, कोई डॉ० नहीं समझता है। आप आँख बंद करके देखें, अगर आपके सामने काला रंग आ रहा है तो आकाश तत्व होगा, यदि नीला दिखे तो वायु तत्व होगा, यदि पीला दिखे तो पृथ्वी तत्व, लाल दिखे तो अग्नि तत्व, और सफ़ेद दिखे तो जल तत्व होगा। पहले युद्ध में जाते समय योद्धा यह सब देखकर जाते थे। गाय

गाते समय सूर्य नाड़ी देखकर गाते हैं। अब इनका ज्ञान नहीं रहा। मैंने बताया कि भक्ति में रोमांस, राजनीति, व्यापार आदि आ गया। .....तो स्वाँसा को उलटा चलाते हैं, जब दोनों स्वर एक हो जाते हैं और सुषुम्ना खुल जाती है तो स्वाँसा उलटी चलने लगती है।

इड़ा पिंगला सुषम्न सम करे, अर्द्ध औ उर्द्ध बिच ध्यान लावै।
कहैं कबीर सो संत निर्भय हुआ, जन्म औ मरण का भ्रम भाने।।

जब दोनों सम हो जाती हैं तो स्वाँसा अष्टम चक्र पर चलने लगती है। यह है उलटा जाप। इसमें शरीर की समस्त वायुएँ एकत्र होकर ऊपर सुषुम्ना में चलने लगती हैं। तब हाथ हिलाना चाहोगे, नहीं

हिलेगा। पता होगा कि हाथ है, पर आज्ञा नहीं मानेगा, क्योंकि पवनें बाहर निकल गयीं। दसों पवनें शरीर में अपना-2 काम कर रही हैं। किसी का काम है, मल को बाहर करना, किसी का काम है, नींद लाना। यह नाग वायु का काम है, जो कण्ठ में रहती है। जब यह बिगड़ जाती है तो पागल भी हो जाता है मनुष्य। यह बड़ा बारीक विषय है। पर घबराने की ज़रूरत नहीं है। **'जब गुरु पूरा मिलता है तो बात खुदा से होती है।'**

इससे आपकी आयु में भी वृद्धि होती है। गोरख जी 700 साल जिए थे। वज्र बना दिया था पूरे शरीर को। आप जितनी चाहे, आयु बढ़ा सकते हैं। स्वाँसों पर आधारित है आपका जीवन। 21,800 स्वाँस दिन में मनुष्य लेता है। यदि पवन योग करके स्वाँसा न ले, केवल दिन में पाँच मिनट ले तो कैसा है! जैसे एक बैटरी में सैल पड़े हैं। यदि 24 घण्टे रहें हैं तो एक ही दिन में ख़त्म हो जायेगी बैटरी। पर यदि धीरे-2 आवश्यकतानुसार चलाएँ तो बहुत समय तक चल सकती है। इस तरह इंसान 120 साल ही ज़्यादा-से-ज़्यादा जी सकता है, पर यदि पवन योग के द्वारा स्वाँसा बचा लीं तो उम्र बढ़ेगी। त्रेतायुग में लोग वायु का संयम करते थे। सभी वायुओं को लेकर शून्य में ले जाते थे। शिवजी भी तो पवन योग कर रहे हैं।

तो इस तरह साहिब ने भक्ति के परम रहस्य दिये हैं। मैं किसी को व्यंग्य नहीं कर रहा हूँ, पर आजकल सत्संगों का स्तर ऐसा हो गया है कि दो योग की क्रियाएँ बता दीं, एक-दो चुटकला बता दिया, फिर एक गीत सुना दिया और मन तरंग में खोकर नाचने लगे। सत्संग की शुरुआत साहिब के दोहे से करेंगे। वाणी से उदाहरण भी देंगे; पर देखो, साहिब क्या कह रहे हैं-

'नाचना गाना ताल पीटना, राँडिया खेल यह भक्ति नाहीं।'

उनकी वाणी लेकर लोगों ने गलत भक्ति की स्थापना कर दी, उनकी बातों को गहराई से नहीं समझा-**'भक्ति ना होय नाचे गाये। भक्ति ना**

होय घंट बजाए।'

इस तरह उन्होंने ध्यान सूत्र भी बारीक बोला।

सकल पसारा मेट कर, मन पवना कर एक।
ऊँची तानो सुरति को, तहाँ देखो पुरुष अलेख।।

कोई साहिब की वाणी को लेकर आज्ञा चक्र में ध्यान को स्थापित कर रहा है। कोई मेरूदण्ड में ध्यान लगा रहा है और साहिब की वाणी ले रहा है, पर साहिब ने शीश से सवा हाथ ऊपर ध्यान को रोकने के लिए कहा।

इड़ा पिंगला सुषमन सम करे, अर्द्ध औ उर्द्ध विच ध्यान लावै।
कहैं कबीर सो संत निर्भय हुआ, जन्म और मरण का भ्रम भानै।।

इस तरह साहिब ने गुरु–महिमा को स्थापित किया। चोरों ने परमात्मा को अधिक महत्व दो डाला, गुरु की महिमा अधिक नहीं कही ताकि लोग उनसे खुश रहें कि परमात्मा की भक्ति कर रहे हैं, पर साहिब ने तो स्पष्ट कहा–

कबीरा हरि के रूठते, गुरु की शरणी जाय।
कहैं कबीर गुरु रूठते, हरि नहिं होत सहाय।।
गुरु गूँगे गुरु बावरे , गुरु के रहिये दास।
जो गुरु भेजें नरक में, ना राखिए स्वर्ग की आस।।

क्योंकि गुरु ने नाम रूपी अमोलक वस्तु दी, इसलिए इतना बड़ा महत्व कहा। चोरों ने कुछ दिया ही नहीं तो महत्व कहाँ से बोलेंगे। आप देखना, मैं आप पर हक रखता हूँ, क्योंकि जानता हूँ कि क ा चीज़ दी। कहीं भूल हो तो डाँटता हूँ, नाराज़ हो जाता हूँ पर पाखण्डी किसी से नाराज़ नहीं होते, क्योंकि जानते हैं कि चला जाएगा त पैसा कौन देगा। उन्हें पैसे की

फक्र है। उनके बंदे उन्हें छोड़ भी देते हैं, पर मेरा नामी अगर

चला भी जाएगा, हज़ारों जगह माथा पटकेगा, पर फिर आख़िर में घूमकर मेरे पास ही आयेगा, क्योंकि आत्मा उस अमृत की तलाश में रहेगी, पर वो कहीं नहीं मिलेगा, तृप्ति नहीं होगी, इसलिए वापिस आना पड़ेगा। आत्मा को जिस अमृत की तलाश है, यहीं मिलेगा और कहीं नहीं। इसलिए तो बार-बार कहा है-**'जो वस्तु मेरे पास है, ब्रह्माण्ड में किसी के पास नहीं है ।'**

तो चोरों ने नाम को कमाई का साधन बनाया। पर साहिब चौंकाने वाली बात कर रहे हैं। **'साधो निःअक्षर सबसे न्यारा।'** कहा-सबसे न्यारा है वो नाम। **'ब्रह्मा विष्णु महेश्वर थाके , तिनहुँ खोज न पाया।'** चौकाने वाली बात है कि नहीं। यह कैसा नाम है भाई! **'क्षर अक्षर निःअक्षर पारा, बिरला साधु पाया।'** क्षर सगुण को कहते हैं, अक्षर निर्गुण को और निःअक्षर महाशून्य की स्थिति है। इसलिए इनसे परे है। **'कोई कहे हलका कोई कहे भारी, सब जग भर्म भुलायौ ।'** वैज्ञानिक तथ्य छिपे हैं साहिब की वाणी में। **'सब आये व्यापार करन को, भेद कोई ना पाया।'**

फिर राम-2 की बात सब कर रहे हैं। किसी चोर ने कोई राम चुरा लिया तो किसी ने कोई, पर साहिब ने जिस राम के लिए कहा, वो कोई समझ नहीं पाया। सगुण वाले कहते हैं कि दशरथ पुत्र राम के उपासक थे, पर उन्होंने तो स्पष्ट कहा-**'दशरथ सुत तिहुँ लोक बखाना। राम नाम का मरम है आना।'** फिर एक स्थाम पर अपने राम को स्पष्ट कर रहे हैं-

एक राम दशरथ घर डोलै, एक राम घट-घट में बोलै।
एक राम का सकल पसारा, एक राम त्रिभुवन से न्यारा।।

स्पष्ट हो रहा है कि दशरथ पुत्र राम के लिए नहीं बोल रहे हैं, घट-घट में समाए हुए निराकार राम के लिए भी नहीं बोल रहे। आगे और अच्छी तरह स्पष्ट कर रहे हैं-

साकार राम दशरथ डोलै, निराकार घट-2 में बोलै।

बिंदू राम का सकल पसारा, निरालंब सबही तें न्यारा।।

वीर्य को भी राम कहा, सृष्टि उसी से हो रही है। तो इस तरह साफ़ शब्दों में साकार, निराकार दोनों से परे वाला राम बताया।

सृष्टि के आदिकाल में राम शब्द का सृजन हुआ। सब ऋषियों ने सोचा कि कौन-2 नाम जपें। फिर सबने शून्य में समाधि की, कहा- जो नाम कपाट के अंदर आयेगा, वही जपेंगे।

ब्रह्मा विष्णु सनकादि, सब मिलि कीन्ही शून्य समाधि।
कवन नाम सुमिरैं करतारा, कवन नाम ध्यान अनुसारा।।

सभी ने शून्य में ध्यान किया। **'तबै निरंजन जतन किया, गुफा से कीन्ह आवाज़।'** शून्य से शब्द हुआ......**'र रा'**। यह शब्द निरंजन ने किया। तब माया ने **'मा'** शब्द किया। **'मा शब्द माया संचारा।'** दोनों को जोड़ा गया। इसमें रहस्य क्या है ! एक छोटा-सा नाम, जिसमें सगुण-निर्गुण दोनों आ गये। जैसे घर में बच्चों को छोटे नाम से पुकारा जाता है।

*** नोट-**एक देशी यात्री है। दूसरा विदेशी यात्री है यह अन्तर तो हम कर रहे हैं। यदि काया नाम (देह नाम) और विदेह नाम की बात आती, तो कहते एक ही बात है। भाईयो! एक बात नहीं, काया नाम काल पुरुष का है और विदेह नाम सत्य पुरुष का है। जो आत्मा को शरीर से अलग करके अमरलोक ले जाता है। इसीलिए कबीर साहिब जी कहते ''देह नाम तो सब जपै, नाम विदेह हमार॥'' आगे फिर कहा- सोई नाम है अक्षर बासा, काया ते बाहर परकासा।

काया नाम सबै ठहरावे। नाम विदेह बिरला कोई पावै॥
छिन इक ध्यान विदेह समाई। ताकी महिमा बरनिन न जाई॥

तो इसमें भी दोनों चीज़ें आ गयीं। माया भी आ गयी और निरंजन भी आ गया। पर संतों ने कुछ और बात की है। **'जिभ्या पर आवै नहीं, निरखि परख के लेह।'**

तो इस तरह चोरों ने साहिब की वाणी को चुराकर निरंजन की बात की है, कर रहे हैं। इन चोरों में से ना तो किसी ने तीन-लोक से परे साहिब के रहस्य को जाना है, ना किसी ने 11वें द्वार के भेद को जाना है, ना किसी को काल-पुरुष द्वारा फैलाए गये भ्रम का कुछ पता है, ना किसी ने सद्गुरु के परमात्मा से भी अधिक महत्व देने की कोशिश की और ना ही इन चोरों में से किसी के पास सच्चा नाम ही है। क्योंकि इनमें से कोई संत नहीं है, सब संतों के चोर हैं।

कहैं कबीर गुरु कृपा बिन

करनी योग कि रहनी वासा। कैसे पाऊँ लोक निवासा।।

क्या उस लोक की प्राप्ति व्यक्ति अपनी करनी से कर सकता है? कोई कहता है कि कर्म द्वारा पार हो सकते हैं, कोई कहता है कृपा द्वारा। देखते हैं, कैसे पार होगा!

कर्म को बहुत महत्व दिया गया, लेकिन कर्म की शक्ति द्वारा यह जीव नहीं छूट सकता। जितने भी कर्म हैं, उनका प्रेरक मन है। जो भी अच्छे-बुरे कर्म मनुष्य कर रहा है, उनका प्रेरक मन है। साहिब ने कहा-**'ये सब साधन से ना होई। तुम्हरी कृपा पाय कोई-कोई।।'** कहा-कृपा से होगा। **'अदाकर खुद खजाने से, छुड़ाले अपने बंदे**

को।' उनकी बिरह की साखियों में आता है–

सुरति करो मम साइयाँ, हम हैं भवजल माहिं।
आपहि हम बह जायेंगे, जो नहिं पकरो बाहिं।।
तुम तो समरथ साइयाँ, दृढ़ कर पकरो बाहिं।
धुरही लै पहुँचाइयो, जनि छोड़ो मग माहिं।।

अन्य-अन्य महापुरुषों ने भी एक बात स्थापित की कि कोई भी अपनी शक्तियों द्वारा पार नहीं हो सकता। फिर कैसी कृपा! आख़िर किस सूत्र द्वारा पार हों! यह चिंतन योग्य है। अगर साधना से, योग-क्रिया द्वारा पार नहीं होगा तो किस कृपा द्वारा! कृपा का आधार क्या है?

हमें गुरु की ज़रूरत पड़ेगी, गुरु के बिना इस जहाँ में कोई भी किसी भी कीमत पर पार नहीं हो सकता है। देखते हैं, कितने महापुरुष इस सिद्धांत को स्थापित कर रहे हैं। तुलसीदास तो कह रहे हैं–**'गुरु बिन भव निज तरई ना कोई। हरि विरंच शंकर सम होई।।'**

अर्थात गुरु के बिना किसी भी कीमत पर कल्याण नहीं होगा। गुरु की आवश्यकता पड़ेगी ही। हमने इस बात को हलके में लिया। विष्णु जी ने भी रामावतार में वशिष्ठ और कृष्णावतार में दुर्वासा को गुरु किया। ब्रह्मा जी ने भी गुरु किया। नारद को तो विष्णु जी ने स्वयं ही गुरु करने भेजा था; फिर कौन मूर्ख कहता है कि गुरु की ज़रूरत नहीं है! अगर हम शास्त्रों पर चिंतन करें तो भी यह बात स्पष्ट रूप से सामने आती है कि गुरु के बिना कल्याण नहीं हो सकता। यानी हमारे अन्तःकरण में वो उर्जा, वो शक्ति नहीं कि अपने सामर्थ्य से पार हो जाएँ। निष्कर्ष रूप से साहिब के शब्दों में एक बात साफ़ सामने आती है–**'बिन गुरु पावै नहीं, कोई कोटिन करे उपाय'** आदमी अपनी साधना से पार क्यों नहीं हो सकता! आख़िर वज़ह क्या है? वास्तव में–

बहु बंधन ते बांधिया, एक विचारा जीव।
जीव विचारा क्या करे, जो ना छुड़ावे पीव।।

बहुत बंधनों से जीव बंधा है और अपनी क्षमता से यह नहीं छूट सकता। जब तक परमात्मा आकर नहीं छुड़ायेगा, नहीं छूट सकता। हरेक के अंदर काल-पुरुष का नेटवर्क है, हरेक के अंदर मन के आठ कोष्ठक हैं। हृदय में अष्टदल कमल हैं, बीच में मन रहता है। यह अष्टदल कमल पर घूमता है। जहाँ-2 यह मन जाता है, वैसा-2 ही स्वभाव आदमी का होता जाता है।

उत्तर दल पर मन जब जाई।
दया भक्ति तब उर में आई।।

इसका मतलब, आदमी का अपना बस नहीं, उसका स्वभाव उसका अपना नहीं।

दक्षिण दल पर मन जब जाई।
महा क्रोध तब उर में आई।।

कभी-2 कुछ कहते हैं कि अभी बात का मूड नहीं है। बिना बात के भी गुस्सा कर लेते हैं। यह सब खेल मन का है। तो कह रहे हैं-

पश्चिम दल पर मन जब जाता।
काम भाव तब उर में आता।।

तब पौन घण्टा आपकी सोच विषय-विकारों की तरफ ही रहेगी। कभी-2 ज़्यादा देर भी मन वहाँ बैठा रहता है। तो कहते हैं कि यह है ही ऐसा। इसी तरह-**पूर्व दल पर मन जब जाई।हंसी भाव तब उर में आई।।** ऐसे में किसी को चलते देख भी हँसी आ जायेगी। आप खुद नहीं समझ पाये गे कि क्यों हो रहा है ऐसा। बिना मतलब की बातों पर भी ह ँसते रहोगे। पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण-ये चार दिशाएँ हैं। फिर चार दिश एँ और हैं-वायु, अग्नि, नैत्रिृत, ईशान। पश्चिम

ौर उत्तर के बीच का कोण-वायु, पूरब और दक्षिण का कोना-अग्नि, पूरब और उत्तर का कोना-ईशान, और पश्चिम और दक्षिण का

कोण–नैऋत।

वायु दल पर मन जब जाई।

लोभ भाव तब उर में आई।।

आपमें ऐसी सोच क्यों आई, आपको पता नहीं है। आपका नियंत्रण नहीं है। इस तरह–**'मन तरंग में जगत भुलाना।'** आगे कह रहे हैं–

अग्नि दल पर मन जब जाई।

ईर्ष्या भाव तब उर में आई।।

ईशान दल पर मन जब जाई।

अहंकार भाव तब उर में आई।।

नैऋत दल पर जब मन जाता।

विरह भाव तब उर में आता।।

इस प्रकार–'**अष्ट दल कमल पर मन धाए, नाना नाच नचाए।'** यह मन आठ तरह का स्वभाव उत्पन्न करता है। क्यों करता है! ताकि आपका ध्यान उसी में रहे, आप सही दिशा में ना जा पाएँ। बड़ा चालाक है यह। हर समय मनुष्य पर सवार रहता है। कोई भी आदमी किसी भी ताकत से इसे कण्ट्रोल में नहीं कर सकता है। किसी में भी इतनी ताक़त नहीं कि मन के नेटवर्क से बाहर निकल सके। **'मन ही निरंजन सबै नचावे। इसको कोई देख ना पाए, नाना नाच नचावे।।'** कभी जीवन में कुछ घटनाएँ होती हैं, फिर पछताते हैं कि क्यों कर दिया। करने वाले भी आप थे, पछताने वाले भी। ऐसा क्यों हुआ! वाह!

चश्म दिल से देख तू, क्या–क्या तमाशे हो रहे ....।।

यह मन बहुत बड़ा बैरी है आपका। खुशी लाया, खुशी रहेगी, उदासी लाया, तो उदासी रहेगी। भाइयो! इस मन से अपनी ताक़त से नहीं छूट पायोगे। **'बिन सतगुरु पावे नहीं.......।।'** गुरु जिस दिन नाम देता

है, पूरा सिस्टम बदल देता है। तभी तो कह रहे हैं–

जब मैं था तो गुरु नहीं, अब गुरु हैं मैं नाहिं ।
प्रेम गली अति साँकरी, तामें दो ना समाहिं ।।

जैसे लेन्स लगाए तो देखने की ताक़त बढ़ जाती है। ऐसे ही नाम से इन मत्सरों को देखने की ताक़त आ जाती है। **'नाम होय तो माथ नमावे। ना तो यह जग बाँध नचावे।।'** नकेल लगी हो तो बड़े साँड को एक बच्चा भी काबू कर सकता है। गुरु मन पर नकेल डाल देता है, वो जानता है कि कैसे काबू करना है। **'मन मानिया, हरि जानिया।'** बस, मन पकड़ में आ जाता है। यह बहुत बड़ा रहस्य है। मैं देख रहा हूँ कि विविध साधनों द्वारा लोग इस भवसागर से पार होने की कोशिश कर रहे हैं, पर नहीं–**'भवसागर का पार, नाम बिना पावे नहीं।'** और यह नाम गुरु के बिना नहीं मिल सकता। इसलिए माया को पार करने की ताक़त किसी में नहीं, गुरु की कृपा से होगा। एक पूर्ण गुरु उस सत्ता का संचार आपमें कर देता है। कोई वैज्ञानिक सीपी से मोती नहीं बना सकता। उसके पेट में सिस्टम है। आज तक किसी भी वैज्ञानिक ने विष से मणि नहीं बनाई है। साँप के पेट में वह सिस्टम है। इस तरह सद्‌गुरु के पास पारस सुरति है, आपको बदल देगा। **'सद्‌गुरु मोर रँगरेज, चुनरि मोरी रंग डारी। शाही रंग छुड़ाएया, दियो मजीठा रंग।।'** इसलिए–

पारस में अरु संत में, बड़ो अंतरो जान।
वह लोहा कंचन करे, वो करले आप समान।।

साहिब की विरह की साखियाँ दर्शाती हैं–

हरि कृपा जो होय तो, नहीं होय तो नाहिं ।
कहैं कबीर गुरु कृपा बिन, सकल बुद्धि बह जाय।।

यह सच है। कह रहे हैं कि परमात्मा की कृपा हो जाए तो अच्छा है, पर यदि न भी हो तो कोई बात नहीं है, पर गुरु की कृपा का

होना बड़ा ज़रूरी है। साहिब ने ऐसे ही नहीं कह दिया–

साहिब के दरबार में, करता केवल संत।
कर्त्ता केवल संत, हुकुम में उनके साहिब।।
सात दीप नव खण्ड में, गुरु से बड़ा न कोय।
कर्त्ता करे न करि सकै, गुरु करै सो होय।।

सर्वशक्तिमान भी जो नहीं कर सकता, गुरु कर सकता है। इसलिए कितना भी योग कर ले, कोई लाभ नहीं। **'कोटि यतन से मन नहीं माना।'** पर जब नाम की उर्जा आती है तो बिलकुल शीशे की तरह आप इन शत्रुओं को देखेंगे, पूरा-2 खेल मन का समझ आने लगेगा। यही है–दिव्य दृष्टि का खुलना। कभी-2 कुछ कहते हैं कि गुरु से क्या मिला! वो जो अलौकिक शक्ति मिली, वो नज़र नहीं आती है। हमारा ध्यान ही तो भौतिक संसार की चीज़ों में है। ....इस तरह तब समझ आने लगता है कि इच्छा मेरी नहीं है। मन किस तरह हमला कर रहा है, यह भी दिखने लगता है। चाहकर भी आप अचेत नहीं हो पाते हैं। **'उसको काल क्या करे, जो आठ पहर हुशियार।'**

मन के हारे हार है, मन के जीते जीत।
कहैं कबीर गुरु पाइये, मन ही की परतीत।।

मन ही शूरमा है और मन ही कायर है। शूरमा कैसे? कोई लड़ने जाता है तो मन अंदर से कहता है कि कोई बात नहीं, मार इसे। कायर कैसे ? यदि सामने वाला अपने से ज़्यादा ताक़तवर हो तो मन अंदर से कहता है कि भाग, मारेगा। इस तरह हरेक मन तरंग में बहे जा रहा है। यह मन शून्य में, अंधकार में रहता है और वहीं से अपने संदेश पहुँचाता है, इसलिए उसे कोई समझ नहीं पाता है। **'मन चीह्ने बिरला कोई।'**

वो अंधकार में सुरक्षित है। अंधकार से चार चीज़ों की उत्पत्ति होती है। मान लो, आप सत्संग में बैठ मुझे सुन रहे हैं, देख रहे हैं। अगर अँधेरा हो जाए तो सबसे पहले अंधकार से अज्ञान उत्पन्न होगा, आपको

दिखेगा नहीं कि क्या चीज़ कहाँ है। रोशनी में ज्ञान होगा। ज्ञान यानी जानना। पता होगा कि टेबल कहाँ है, खंबा कहाँ है। अंधकार की वृत्ति अज्ञान है। जहाँ अंधकार है, पहले तो वहाँ अज्ञान होगा। फिर दूसरा शंका होगी, संशय होगा। यानी अज्ञान से संशय की उत्पत्ति होगी। चलोगे तो शंका होगी कि ठीक जा रहा हूँ या नहीं। फिर भय उत्पन्न होगा। अंधकार से अवश्य ये चार चीज़ें उत्पन्न होंगी। इसलिए मन अंधकार में रहता है, इसलिए उसे कोई देख नहीं पा रहा। **'मन को कोई देख न पाए, नाना नाच नचाए।'** कष्ट मन ही दे रहा है। स्वभाव से ही यह मन बड़ा जटिल है, दुख देने वाला है।

मन का पता चलता है, इसे ठीक से पढ़ना, इस मन के चार रूप हैं–मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार। जब यह इच्छाएँ करता है, संकल्प करता है तो इसे मन कहते हैं। देखो, सभी इच्छाएँ कर रहे हैं, पर आत्मा चाह, अचाह दोनों से परे है।

चाह मिटी चिंता मिटी, मनवा बेपरवाह।
वो ही शाहनशाह है, जिसको नाहीं चाह।।

इसलिए मन का पहला रूप है–संकल्प। इच्छा से ही दुख होता है, इसी से सुख होता है। जब इच्छा पूर्ण होती है तो सुख मिलता है और जब नहीं होती तो दुख होता है। संसार का सुख-दुख दोनों बंधनकारक हैं। मन का दूसरा रूप है–बुद्धि। फैसला करना इसका काम है। फिर तीसरा रूप है–चित्त। जो भी याद कर रहे हैं कि फलाने गाँव का हूँ, वहाँ मेरा घर है आदि यह चित्त है। चित्त चाहे, अनचाहे सक्रिय रहता है। चौथा रूप है–अहंकार। जो भी क्रियाएँ कर रहे हैं, अहंकार है। यह-2 कर रहा हूँ। यह-2 करूँगा, अहंकार का काम है। आत्मा में अहंकार नहीं है। अहंकार से द्वन्द्व उत्पन्न होता है। ये सब चीज़ें उत्पन्न हो रही हैं। आत्मा निर्द्वन्द्व है। इनकी साँठ-गाँठ है। बिलकुल आप यह नेटवर्क नहीं समझ पा रहे हैं। पिण्ड का संचालन करने वाला मन है, ब्रह्मण्ड का

संचालक भी मन है। आत्म-देव फँसा हुआ है।

जब भी आप ध्यान में जाते हैं तो मन रुकावट डालता है। मन ने इच्छा की मान लो कि दो कमरे बनाने हैं ध्यान हट गया। मन ने इच्छा की और बुद्धि प्लानिंग में लग गयी। **'मनवाँ तो दस दिशि फिरै, यह तो सुमिरन नाहिं।'** फिर यह सब दिन भर चल रहा है। **'अनहद लूट होत घट भीतर, घट का मरम ना जाना।'** हरेक उलझा है। मन चाहता क्या है ! किसी भी कीमत पर ध्यान एकाग्र न हो, क्योंकि यदि ध्यान एकाग्र हो जाए तो फिर इसमें ज्ञान आ जाता है। यह आपको अज्ञान में रखना चाहता है भाइयो।

चोर अंधकार से प्रेम करता है, क्योंकि उसमें उसे कोई पहचान नहीं सकता और न ही पकड़ सकता है। दिन में चोरी करके भागे तो कोई पकड़ लेगा। अंधेरे में हज़ार आदमी भी नहीं पकड़ पायेंगे। इस तरह अज्ञान मन का पौषक है, इसलिए मन अंधकार में रहता है, शून्य में रहता है। **'जो कोई कहे मैं मन को देखा, उसकी रूप ना रेखा। पलक-2 में वो दिखलाए, जो सपने नहीं देखा। संतो मन का करो विवेका।।'** ....तो बुद्धि फैसले में लग जाती है और आप ऊब जाते हैं ध्यान में बैठे-बैठे। कुछ नहीं मिलता। इसका मतलब है कि मुक्ति में रुकावट ही मन है। यह बड़ी ड्यूटी से आपको 24 घण्टे भ्रमित कर रहा है। इसलिए कह रहे हैं-**'तेरा बैरी कोई नहीं, तेरा बैरी मन।'** आपका समय नष्ट करता है मन। फिर चित्त आकर बताता जाता है कि मिस्त्री वहाँ मिलेगा, सीमेंट वहाँ से, बलियाँ वहाँ से। बस यह शेखचिल्ली वाला मसला हो जायेगा। आप चाहकर भी इसे अपनी ताक़त से काबू नहीं कर सकते हैं।

कभी-2 मनुष्य मन का निग्रह करता है, विचारों पर नियंत्रण कर लेता है, पर फिर कुछ दिन बाद पुनरावृत्ति में आ जाता है। इसका मतलब है, मन में बड़ी ताक़त है, जो चाहता है, करवा के छोड़ता है। यदि चाहा, आम खाना है तो खिलाके छोड़ेगा। आदमी अपनी ताक़त से

इससे टक्कर नहीं ले सकता है। दुनिया का कितना भी बुद्धिमान व्यक्ति क्यों ना हो, नहीं ले पायेगा टक्कर मन से। इसलिए–'**कहैं कबीर गुरु कृपा बिन, सकल बुद्धि बह जाय।'**

कभी–2 आप चाहते हैं कि सत्संग बंद न हो। वास्तव में मैं त्राटक द्वारा सत्संग क्षेत्र को बाँध देता हूँ ताकि आपका ध्यान बाहर न जाए। कभी माँ बच्चे को घुट्टी पिलाती है। बच्चे को कड़वी लगती है, पर माँ जानती है कि इसके हित में है। मेरा भाई ऐसे नहीं पीता था तो माँ मुझे कहती कि इसके हाथ पकड़, उसकी टाँगें भी न हिलने देना। फिर नाक पकड़ लेती। जब उसका मुँह साँस लेने के लिए खुलता तो डाल देती थी। मुझे भी पिलायी है, जबरन भी पिलायी है। भैया, आप सत्संग सुनने वाले भी नहीं हो; यह तो घुट्टी वाला मसला है।**'आप ही कण्डा तौल तराजू, आप ही तौलन हारा। आप ही लेवे आपही देवे, आपही है बनजारा। आप ही आप का खेल यह सारा।।'**

एक आदमी आया, कहा–आपने नाम दान के समय कहा था कि तन, मन, धन तीनों दो। फिर कहा कि यह तन हमारा है, इससे पाप नहीं करना, फिर कहा–धन भी हमारा है। ठीक है, धन भी दे दिया। इसे मेरा समझ के इस्तेमाल करना। फिर कहा–मन भी हमारा है। हमने कहा–ठीक है। फिर आपने कहा कि भई देखो, सच्चे हृदय से दो। हमने दिया। फिर आपने तन वापिस दे दिया, कहा–जब ज़रूरत पड़ेगी तो बुला लूँगा। फिर कहा कि धन भी ले लो, तुम्हें ज़रूरत पड़ेगी। फिर आपने कहा कि मन वापिस नहीं दे रहा हूँ। पर गुरु जी हमको दिन–रात तंग कर रहा है यह मन। क्या वो बातें फर्जी थीं! बहुत अच्छा प्रश्न किया उसने, वो संशय में था। कहा–जब आपके पास ही है तो इधर तंग क्यों कर रहा है।

मैंने कहा–आप कभी–2 पशु को 40–50 मीटर रस्सी में बाँध देते हैं ताकि आसपास का घास खा ले। पशु सोचता है कि आज़ाद हूँ, वो भागता भी है, पर उतना ही भाग पाता है, जितना रस्सी में बाँधा हुआ है। फिर झटका लगता है और वापिस खिंच जाता है। भाई, मैंने तुम्हारे मन को ऐसे ही बाँधा हुआ है। पर जैसे मारने वाली गाय हो तो सीधा खूँटे के साथ बाँध देते हो। इस तरह सुरति मेरे पास रखना, फिर तमाशा भी देख लेना। कहा–पहले तू पाप कर्म भी कर लेता था ना। कहा–हाँ। पूछा–अब? कहा–नहीं। मैंने कहा–पूरा बाँध दूँगा तो घर भी नहीं जा पायेगा। फिर तेरा कोई पड़ोसी भी मेरे पास नाम लेने नहीं आयेगा। उसने कहा–मान गया, चाहकर भी मज़ा नहीं आ रहा है। तभी तो कह रहे हैं–
'गुरु की कृपा कटे यम फाँसी। बिलंब न होय मिलै अविनाशी।।'
सत्य है–

कहैं कबीर गुरु कृपा बिन, सकल बुद्धि बह जाय।

नारी निंदा ना करो

नारी निंदा ना करो, नारी नर की खानि।
नारी तो प्रकट भये, ध्रुव प्रह्लाद समान।।

इंसान ने नारी पर जमकर अत्याचार किया है। पर नारी के गुणों को वो पहचान न सका है। कुछ सोचते हैं कि संतों ने नारी से घृणा की है, उसे माया कहा है। नहीं! स्त्री माया नहीं है। वो तो एक वर्ण है। वास्तव में माया संतों ने शरीर को, पंच भौतिक तत्व को कहा है। जैसे पुरुष के लिए स्त्री बंधनकारक है, ऐसे ही स्त्री के लिए पुरुष भी बंधनकारक है। पर हर दृष्टि से नारी अधिक सम्माननीय है। नारी नर की खानि है। इसलिए माता–पिता में माँ को ही अधिक महत्व दिया गया।

पता है, स्त्री भक्ति में भी श्रेष्ठ है। क्योंकि सर्वप्रथम तो यह पाप से दूर है। पुरुष पाप करता है। नारी कोई बिरली ही ऐसी मिलेगी। फिर प्रेम भी इसमें ज़्यादा है। भक्ति प्रेम ही तो है। इसलिए नारी भक्ति के लिए बिलकुल उपयुक्त है। यह समर्पित हो जाती है। नारी से प्रेम करो, उसे वासना की दृष्टि से मत देखो। कुछ तो नारी को ऐसे घूरकर देखते हैं, मानो कच्चा खा जायेंगो। नारी की इज़्जत करना सीखो, उसकी रक्षा करना सीखो।

एक पापी था, स्वार्थवश उसने बड़े पाप किये थे, संयोगवश उसकी मुलाकात एक साधु से हुई। कुछ बातचीत हुई, संगत का प्रभाव उस पर पड़ा। उसने कहा-महाराज़! मैं तो बहुत बड़ा पापी हूँ। 68 हत्याएँ कर चुका हूँ, मेरा कल्याण कैसे होगा! साधु ने उसे लाल रंग का एक कपड़ा दिया, कहा-जा! सभी तीर्थों का भ्रमण कर, हर तीर्थ में जाकर प्रण करना कि आगे से मैं अच्छा जीवन जिऊँगा। ऐसे में जिस तीर्थ में ईश्वर ने तुम्हारी पुकार सुन ली, वहाँ तुम्हारा कपड़ा सफ़ेद हो जायेगा। कहा-ठीक है। वो साधु को प्रणाम कर चल पड़ा। बहुत सारे तीर्थ घूम चुका, पर कपड़ा सफ़ेद नहीं हुआ। अब थोड़ा-सा निराश भी हुआ। किसी वीरान जंगल से गुज़र रहा था तो स्त्री के बचाओ-2 की आवाज़ सुनाई दी। वो उस ओर गया तो देखा कि चार दुष्ट एक स्त्री को जबरन उठाकर ले जा रहे हैं। निडर तो वो था ही, निकाली अपनी तलवार और भागा उनके पीछे। वे चार थे, लड़ने को प्रस्तुत हुए। पर गलत इंसान हमेशा अंदर से कमज़ोर होता है। उसकी ताक़त ज़रूर कम हो जाती है। आख़िर एक-दो चोट उसे आई, पर एक को तो उसने वहीं सुला दिया और तीन जान बचाकर भाग गये।

भागते हुए उसका कपड़ा गिर गया था, सो वो उसे लेने गया। जब देखा तो हैरान रह गया; वो सफ़ेद हो चुका था। बड़ा ख़ुश हुआ, वापिस आकर उस साधु के पास आया, कहा-पाप धुल गये, बिना प्रण के धुल गये। साधु ने पूछा कि किस तीर्थ में धुले! कहा-69वें तीर्थ में धुले।

तो कहने का भाव है कि स्त्री की इज़्जत करना सीखो, उसे

सताओ मत। उसे प्रेम दो, वासना नहीं; उसे इज़्जत दो, लो नहीं; उसका सिर ऊँचा रखो, उसे झुकाओ नहीं; उसे निर्भय रखो, भय मत दो। बेचारी नारी की ही अग्नि परीक्षा ली गयी। पुरुष की अग्नि परीक्षा क्यों नहीं हुई! नारी पर अत्याचार हुए हैं।

बेटी, बहन, माँ, पत्नी–सब रूप ही तो इसके सराहनीय हैं। बुरे और दुश्मन बेटे की तरह यह कभी दुश्मन और बुरी बेटी नहीं बनी; बुरे भाई की तरह यह बुरी बहन नहीं बनी; कठोर पिता की तरह यह कठोर माता नहीं बनी और बुरे पति की तरह यह बुरी पत्नी नहीं बनी। पर फिर भी इसे दुख ही दिये गये। किसी ने इसके दुखों को समझने का प्रयास नहीं किया। यह मूक प्राणी बनकर सब सहन

र लेती है, पर अंदर–ही–अंदर इसका हृदय दुखी रहता है। हमारे नामी 'चुलबुल अकेला' ने स्त्री के माँ रूप पर बड़ा प्यारा क हते हुए बेटे को संदेश दिया है–**माँ की सेवा कर ले बंदे, क्यों बनता है बेईमान।**

कितना बदल गया इंसान।।
नौ माह गर्भ में रखती, प्रसव कष्ट भी सहती माँ।
अपने रक्त से सींच कर, भर देती है तुझमें प्राण।
उसकी औलाद को देखो, नहीं आता वो माँ के काम।।
कितना बदल गया इंसान।।
धूप–छाँव से माँ ही बचाये, लोरी गाके माँ ही सुलाये।
उंगली पकड़ के चलना सिखाये, ऐसी प्यारी होती माँ।
जब भी रोये माँ का दुलारा, दौड़ी आये छोड़के काम।।
कितना बदल गया इंसान।।
माँ की सेवा करता नहीं क्यूँ, चलता है तू सीना तान।
कष्ट पड़े जो माँ के ऊपर, मिट जायेगी तेरी शान।

माँ की ममता अनमोल है भाई, क्यों मोल करे है तू शैतान।।
कितना बदल गया इंसान।।
भाई–बंधु, रिश्ते–नाते, सभी स्वार्थी और बेईमान।
धन–धौलत सब धरी रहे गी, नहीं आयेगी तेरे काम।
माँ की सेवा करले बंदे, यदि है तू सच्चा इंसान।।
कितना बदल गया इंसान।।

यह तो माँ के लिए कहा। इस तरह नारी का हर रूप आदरनीय है, सराहनीय है। बेटी का रूप भी बड़ा प्यारा है। सभी बेटे की कामना करते हैं, पर बेटा तो दुश्मन होता है। साहिब ने बिलकुल पारदर्शी वाणी कही। आप इस पर विचार तो करें। '**पुत्र समान को है बैरी।**' बेटा पक्का स्वार्थी होता है। एक सेठ मेरे पास आया, कहा–दुखी हूँ। मैंने पूछा–क्या बात है? कहा–बेटों ने धन छीन लिया मेरा; कहते हैं कि अब आपका सन्यास लेने का समय हो गया है, और सभी अलग–2 हो गये हैं; मुझे पाँच हज़ार जीविका के लिए दे गये हैं। वो सेठ 10–12 करोड़ का मालिक था। भाइयो! आप विचार तो करो! फिर बेटा माँ–बाप को मारता भी है, पर आपने कभी नहीं देखा होगा कि कोई बेटी अपने माता–पिता को मारती हो। वो नहीं मारती है। विवाह होने के बाद भी ख़बर लेती रहती है कि कहीं भाभी तो माँ को तंग नहीं कर रही, कहीं भाई तो कष्ट नहीं दे रहा। उसमें ममता भरी है, उसमें प्रेम भी बड़ा है।

मेरे पास लोग बच्चों का नाम रखवाने आते हैं। मुझे पूछने की ज़रूरत नहीं पड़ती कि बेटा है या बेटी। यदि बेटी होगी तो चेहरा मुरझाया हुआ–सा होगा और धीरे–से कहेंगे कि क्या नाम रखें। दूसरी ओर यदि बेटा होगा तो प्रसन्नचित्त मुद्रा में होंगे; साथ में मिठाई का एक डिब्बा और ऊपर 500 का नोट होगा, कहेंगे कि आपकी कृपा से हुआ है गुरु जी। पता है, यदि मैंने शादी करना था तो क्या चाहना था। ख़ैर मैंने तो शादी करनी ही नहीं थी; पर फिर भी, मान लो, अगर करनी भी थी तो पहले बेटी चाहनी थी। लोग दहेज के पीछे रोते हैं, पर उसके गुणों

को कोई नहीं पहचानता। हम छह भाई थे और एक बहन थी। पिता जी बीमार थे सुबह चाय पीते थे। पर हम छः में से कभी कोई पिता जी को चाय नहीं पिलाया होगा सुबह, पर बहन तब 6-7 साल की थी; वो बनाकर पिलाती थी। हम सब मस्त थे। यानी वो सेवा भी बड़ी तगड़ी करती है। सारे घर को संभाल कर रखती है नारी। पता है, नारी की देख-रेख में ही घर चलता है।

पुरुष ने तो नारी को अपने पाँव की जूती समझ लिया। एक बंदा मेरे पास आया, कहा-आपको ज़मीन देनी है। मैंने कहा-पत्नी से पूछ लिया है! उसकी सहमती है क्या! कहा-उससे क्या पूछना! मैंने कहा-नहीं! उससे पूछ कर आ पहले।

पुरुष ने तो स्त्री को सदा से ही दासी बनाकर रखा है, उसे अपने मनोविनोद की वस्तु समझा है। अपनी पत्नी को पुरुष नाम लेकर बुलाते हैं, पर वो बहुत समझदार व्यक्ति है, जो उसे नाम से नहीं बुलाता। पुरुष अपनी पत्नी पर हक जमाता है, पर वो बड़ा समझदार व्यक्ति है, जो उसे अपने पर हक प्रदान करता है। किसी भी काम में पुरुष अपनी पत्नी की राय नहीं लेता है, पर वो बड़ा समझदार है, जो उसकी राय लेकर काम करता है।

रहीम दोहावली

जाल परे जल जात बहि, तजि मीनन कै मोह।
रहिमन मछरी नीर को, तऊ न छाड़ति छोह।।

मछली के प्रेम की महानता को बताते हुए रहीम जी कहते हैं कि जब शिकारी जाल लगाता है तो जल मछली के मोह को छोड़कर जाल में से निकल जाता है, बह जाता है, पर मछली का प्रेम इतना गहरा है कि वो तब भी प्रेम नहीं छोड़ती और प्राण त्याग देती है।

जेहि रहीम तन-मन लियो, कियो हिए बिच भौन।
तासों दुख सुख कहन की, रही बात अब कौन।।

रहीम जी कहते हैं कि जिस गुरु ने मेरा तन-मन लिया है और मेरे हृदय में आकर बस गया है, उससे भला अब अपने दुख-सुख की बात क्या करूँ! अर्थात वो तो सब कुछ जानता है।

रहिमन कबहुँ बड़े न के, नाहिं गर्व को लेस।
भार धरै संसार को, तऊ कहावत सेस।।

रहीम जी कहते हैं कि श्रेष्ठ मनुष्य बड़े-से-बड़ा काम क्यों न करें, उन्हें इस बात का घमण्ड नहीं होता है। देखो, धरती का भार उठाकर भी सर्पों के राजा शेषनाग ही कहलाते हैं।

रहिमन खोजे ऊख में, जहाँ रसनि की खानि।
जहाँ गाँठ तहँ रस नहीं, यही प्रीति में हानि।।

रहीम जी कहते हैं कि गन्ना रस की खानि है, पर जहाँ-2 गन्ने में गाँठ होती है, वहाँ-2 रस नहीं मिलता। इसी तरह जहाँ प्रेम के बीच स्वार्थ की, मतलब की गाँठ आ जाती है, वहाँ प्रेम की हानि हो जाती है, प्रेम रसहीन हो जाता है।

राम न जाते हरिन संग, सीय न रावन सात।
जो रहीम भावी कतहुँ, होत आपने हाथ।।

रहीम जी कहते हैं कि भाग्य मनुष्य या देवता किसी के हाथ में नहीं है। यदि भाग्य किसी के हाथ में होता तो राम जी हिरन के पीछे न भागते और सीता को रावण ना ले जाता। यह सब भाग्य का खेल था।

जलहिं मिलाय रहीम ज्यों, कियों आपु संग छीर।
अंगवहिं आपुहि आप त्यों, सकल आँच की भीर।।

जल दूध में मिलकर अपनी पहचान खो देता है और दूध के

समान हो जाता है। फिर जब उस दुध को अग्नि पर रखा जाता है तो भी दूध पर कोई आँच नहीं आने देता और उसकी ख़ातिर स्वयं जलकर अपना अस्तित्व तक मिटा देता है। ऐसी ही स्थिति सच्चे प्रेम में होती है।

जो सुलगे तो बुझ गये, बुझे ते सुलगे नाहिं।
रहिमन दाहे प्रेम के, बुझ बुझ के सुलगाहिं।।

रहीम जी कहते हैं कि आग लगने के बाद बुझ भी जाती है और जो आग बुझ जाती है, फिर सुलगती नहीं है। पर सच्चे प्रेम की अग्नि एक बार लग जाए तो बुझती नहीं है बल्कि बुझ–2 के भी सुलगती रहती है यानी सच्चा प्रेम कभी समाप्त नहीं होता।

प्रीतम छवि नैनन बसी, पर छवि कहाँ समाय।
भरी सराय रहीम लखि, पथिक आप फिर जाय।।

रहीम जी अपने इष्टदेव के प्रति अनन्य भाव की भक्ति का संदेश देने हेतु कहते हैं कि प्रियतम की छवि मेरी आँखों में बस गयी है, इसलिए अब इसमें दूसरी छवि नहीं समा सकती है। जैसे सराय को भरी हुई देखकर यात्री खुद ही लौट जाता है, ऐसी ही स्थिति मेरे नैनों की सराय की हो गयी है।

रहिमन अति न कीजिए, गहि राखिए निज कानि।
सैजन अति फूले तऊ, डार पात की हानि।।

रहीम जी कहते हैं कि किसी भी चीज़ की अति नहीं करनी चाहिए, अपनी एक मर्यादा में रहना चाहिए। खासकर अहंकार तो बिलकुल नहीं करना चाहिए। देखो, सहिजन का पेड़ भी जब अधिक फूल जाता है तो आख़िर उसकी डालियाँ, पत्ते सब नष्ट हो जाते हैं।

बसि कुसंग चाहै कुसल, यह रहीम जिय सोस।
महिमा घटी समुद्र की, रावन बस्यो परोस।।

रहीम जी कहते हैं कि मेरे हृदय में सोच आती है कि दुष्ट

व्यक्ति के पास रहने से कुशल सम्भव नहीं है। देखो, रावण पड़ोस में रहता था तो समुद्र पर भी पुल बँध गया, उस बेचारे की महिमा भी कम हो गयी।

रहिमन याचकता गहे, बड़े छोट ह्वै जात।
नारायण हूँ को भयो, बावन अंगुर गात।।

रहीम जी कहते हैं कि माँगने से बड़े भी छोटे हो जाते हैं। देखो, चाहे विष्णु जी ही क्यों न थे, जब उन्हें राजा बलि से तीन पग पृथ्वी माँगनी थी तो छोटा होना पड़ा था, बावन अंगुल का होना पड़ा था।

पुन पुन बंदौं गुरु के, पद जलजात।
जिहि प्रताप तैं मन के, तिमिर बिलात।।

रहीम जी कहते हैं कि गुरु के चरणों की बार-2 वंदना करो, क्योंकि उनकी कृपा से ही मन का अंधकार दूर होता है।

रहिमन सो न कछू गनै, जासों लागे नैन।
सहि कै सोच बेसाहियो, गयो हाथ को चैन।।

रहीम जी कहते हैं कि यदि किसी को सच्चा प्रेम हो जाए, ऐसी अमोलक वस्तु मिल जाए तो फिर उसके लिए किसी भी वस्तु का कोई मोल नहीं रह जाता। वो प्रेम के पीछे कुछ भी सह लेता है और जब तक प्रेमी नहीं मिल जाता तब तक के लिए उसका चैन खो जाता है।

रहिमन दुरदिन के परे, बड़े न किए घटि काज।
पाँच रूप पाण्डव भए, रथ वाहक नलराज।।

रहीम जी कहते हैं कि बुरे दिन आने पर बड़े-बड़ों ने भी छोटे-2 काम किये, नौकर-चाकर बने। देखो, पाण्डवों को अज्ञात वर्ष का समय काटने के लिए विराट नरेश के यहाँ छोटी-2 नौकरियाँ करनी पड़ीं और राजा नल को भी किसी दूसरे राजा का सारथी बनना पड़ा। कहने का भाव है कि बुरी परिस्थितियों में पड़कर मनुष्य को छोटा काम भी

करना पड़ सकता है, उसे चिंता नहीं करनी चाहिए।

जेहि अंचल दीपक दुर्यो, हन्यो सो तीही गात।
रहिमन असमय के परे, मित्र शत्रु है जात।।

रहीम जी कहते हैं कि जब बुरा समय आता है तो मित्र भी शत्रु समान हो जाते हैं। देखो, गृहणी ने जिस दीपक को तेज़ हवा के झोंकों से बचाने के लिए उसे अपने आँचल में छिपा लिया, बुरे समय के परिणामस्वरूप उसी दीपक ने उसका शरीर जला दिया।

रहिमन प्रीत न कीजिए, जस खीरा ने कीन।
ऊपर से तो दिल मिले, भीतर फाँकें तीन।।

रहीम जी कहते हैं कि खीरे की भाँति प्रेम मत करना, खीरा ऊपर से तो एक ही लगता है, लगता है कि इसका दिल एक से मिला हुआ है, पर जब काटो तो पता चलता है कि इसके भीतर तीन फाँकें हैं। यानी प्रेम बँटा हुआ नहीं होना चाहिए।

रहिमन जो तुम कहते थे, संगति ही गुन होय।
बीच उखारी रमसरा, रस काहे ना होय।।

रहीम जी अपने से ही कहते हैं कि तुम तो कहते थे कि संगत से ही गुण होता है, तो गन्ने के पास जो सरकण्डा उग आता है, उसमें रस क्यों नहीं होता! कहने का भाव है कि बहुत नीच व्यक्ति पर अच्छी संगत का प्रभाव नहीं होता। '**सूर काली कांबली, चढ़त न दूजो रंग**' वाली बात होती है। ऐसे ही सच्चे साधुओं पर दुष्ट लोगों की संगत का प्रभाव नहीं पड़ता। '**चंदन विष न व्यापई, लपट रहत भुजंग**' वाली बात होती है। संगत के प्रभाव से अच्छे से बुरे या बुरे से अच्छे बन सकने वाले अधिकतर मध्यम कोटि के लोग ही होते हैं।

जो रहीम दीपक दसा, तिय राखत पट ओट।
समय परे तें होत है, वाही पट की चोट।।

रहीम जी कहते हैं कि बुरे समय में हितकारी भी अहितकारी

बन जाते हैं। देखो, जो स्त्री एक समय दीपक को तेज़ हवा के झोंकों से अपनी चुनरी से बुझने से बचा लेती है, वही दीपक के बुरे समय में उसी चुनरी के वस्त्र से हवा करके उसे बुझा भी देती है।

समय परे ओछे बचन, सबके सहै रहीम।
सभा दुसासन पट गहे, गदा लिए भीम।।

रहीम जी कहते हैं कि विपरीत समय में मनुष्य को सबके कड़वे बोल सुनने पड़ जाते हैं। देखो, जब धृतराष्ट्र की सभा में दुःशासन द्रौपदी का वस्त्र हरण कर रहा था तो भीम को भी विपरीत समय होने से गदा हाथ में लिए चुप रहना पड़ा था।

ऊगत जाहि किरन सों, अथवत ताहि कांति।
त्यों रहीम सुख-दुख सबै, बढ़त एक ही भांति।।

रहीम जी कहते हैं कि मनुष्य को ठीक उसी प्रकार सुख-दुख दोनों में सम भाव से रहना चाहिए, जैसे सूर्य ऊदय हो रहा होता है तो लालिमा लिए होता है और जब अस्त हो रहा होता है तो भी लालिमा लिए होता है।

रहिमन तीर की चोट तैं, चोट परे बचि जाय।
नैन बान की चोट तैं, चोट परे मरि जाय।।

रहीम जी कहते हैं कि तीर की चोट से तो बचा जा सकता है, पर नारी के नयन बाणों की चोट से बचना बड़ा मुश्किल है।

जब लग वित्त न आपुने, तब लगि मित्र न कोय।
रहिमन अंबुज अंबु बिनु, रवि नाहिं न हित होय।।

रहीम जी कहते हैं कि जब तक अपने पास धन न हो, तब तक कोई मित्र नहीं बनता। देखो, जब तक कमल का फूल सरोवर के जल में रहता है, तब तक सूर्य का प्रकाश भी उसके लिए हितकर होता है यानी सूर्य भी उसकी मदद करता है; पर जैसे ही जल सूख जाता है तो सूर्य भी

उसके लिए अहितकरी बनकर उसे नष्ट कर देता है।

कहि रहीम या जगत में, प्रीति गई दै टेर।
रहि रहीम नीच में, स्वारथ स्वारथ हेर।।

रहीम जी कहते हैं कि आज संसार में सच्चा प्रेम लुप्त हो गया है, क्योंकि स्वार्थ रहित प्रेम करने वाले नहीं रहे। प्रेम अब स्वार्थी नीच मनुष्यों के हृदय में जा बसा है, इसलिए सच्चा प्रेम नहीं दिख रहा।

कहि रहीम सम्पत्ति सगे, बनत बहुत बहु रीति।
बिपति कसौटी जे कसे, सोई साँचे मीत।।

रहीम जी कहते हैं कि जिसके पास पैसा होता है, सुख होता है, उसके संसार में बड़े मित्र बन जाते हैं, अलग-2 तरीके से लोग उससे मित्रता जोड़ लेते हैं; पर जो विपत्ति में भी काम आते हैं, वे ही सच्चे मीत होते हैं।

माह मास लहि टेसुआ, मीन परे थल और।
त्यों रहीम जग जानिये, छुटे आपुने ठौर।।

रहीम जी कहते हैं कि अपने मूल स्थान से दूर रहने वाला व्यक्ति दुख ही पाता है। देखो, जल में रहने वाली मछली रेत पर आ जाए तो तड़प-2 कर मर जाती है। भाव यह है कि आत्मा भी अपने मूल स्थान से दूर इस संसार में आकर दुख ही पा रही है।

रहिमन लाख भली करो, अगुनी अगुनी न जाए।
राग सुनत पय पिअतहू, साँप सहज धरि खाय।।

रहीम जी कहते हैं कि चाहे कितना भी भला करो, दुष्ट लोग अपनी दष्टता नहीं छोड़ते। देखो, साँप को चाहे कितना भी दूध पिला लो, वो फिर भी मौका मिलने पर डंक मार ही देता है।

रहिमन बिगरी आदि की, बनै न खरचै दाम।
हरि बाढ़े आकास लौं, तऊ बावने नाम।।

रहीम जी कहते हैं कि एक बार जब कोई बात बिगड़ जाती है

तो फिर चाहे उसे सुधारने का कितना भी प्रयास करो, कितना भी पैसा खर्च कर लो, नहीं ठीक होती। देखो, विष्णु जी बावन अंगुल के बनकर बलि से माँगने गये; फिर बाद में चाहे उन्होंने अपना कद आकाश तक बढ़ा लिया, लेकिन आज तक वे बावन ही कहे जाते हैं।

जो रहीम तन हाथ हैं, मनसा कहुँ किन जाहिं।
जल में जो छाया परी, काया भीजति नाहिं।।

रहीम जी कहते हैं कि मनुष्य का मन चाहे कहीं भी चला जाए, भटके, पर यदि वो शरीर को न जाने दे, रोके रखे तो मन कुछ नहीं कर सकता। देखो, जल में मनुष्य की छाया पड़ती है तो भी काया भीगती नहीं है।

बिरह रूप धन तम भयो, अवधि आस उद्योत।
ज्यों रहीम भादों निसा, चमकि जात खद्योत।।

रहीम जी कहते हैं कि बिरह रूपी गहरा अंधकार जब हो जाता है, तभी प्रभु रूपी, गुरु रूपी प्रियतम से मिलन की आशा जगती है। देखो, भादों की रात में ही जुगनू चमक कर आशा रूपी प्रकाश की किरणें फैलाते हैं।

दुरदिन परे रहीम कहि, भूलत सब पहिचानि।
सोच नहीं वित्त हानि को, जोन जोय हित हानि।।

रहीम जी कहते हैं कि जब मनुष्य के बुरे दिन आते हैं तो अपने लोग पहचानते भी नहीं हैं; पास में से ऐसे निकल जाते हैं, जैसे जानते ही नहीं हों। बुरे दिनों में धन की हानि का इतना दुख नहीं होता, जितना कि इस बात का होता है कि अपने भी पराया-सा व्यवहार करने लग जाते हैं।

एकै साधै सब सधै, सब साधै सब जाय।
रहिमन मूलहिं सींचबौ, फूलहि फलहि अघाय।।

रहीम जी कहते हैं कि एक परमात्मा की भक्ति करने से सबकी भक्ति हो जाती है, जबकि सब देवी-देवताओं की भक्ति से कोई लाभ नहीं होता, कोई भी प्रसन्न नहीं होता। उदाहरण देते हुए वे कहते हैं कि यदि वृक्ष की जड़ को पानी दे दिया जाए तो फूल, फल पत्ते सबको पानी मिल जाता है। इसके विपरीत यदि एक-2 पत्ते को पानी देते रहें तो हमारा प्रयास बेकार ही जाता है, क्योंकि ऐसे में पौधा एक दिन नष्ट हो जाता है और कुछ हाथ नहीं आता।

दिव्य दीनता केरसहिं, का जाने जग अंधु।
कली बिचारी दीनता, दीनबंधु में बंधु।।

रहीम जी कहते हैं कि दीनता आनन्ददायक होती है, उसमें दिव्यता होती है; पर यह संसार अंधा है, जो दीनता का महत्व नहीं जानता। वास्तव में दीनता ही ईश्वर की प्राप्ति में सहायक होती है। प्रभु को दीनबंधु ही कहा जाता है यानी वो दीनों का ही मित्र है।

रहिमन नीचन संग बसि, लगन कलंक ना काहि।
दूध कलारी कर गहे, मद समुझै सब ताहि।।

रहीम जी कहते हैं कि यह मत सोचना कि नीच के संग से कलंक नहीं लगेगा अर्थात दुष्ट का संग करने से कलंक लग ही जाता है। जैसे मदिरा बेचने वाले के हाथ में दूध भी होगा तो सब लोग यही समझेंगे कि इसके हाथ में मदिरा है।

रहिमन कठिन चितान तै, चिंता को चित चैत।
चिता दहति निर्जीव को, चिंता जीव समेत।।

रहीम जी कहते हैं कि चिंता चिता से भी अधिक कठिन है। चिता तो निर्जीव शरीर को ही जलाती है, पर चिंता जीवित प्राणी के हृदय को जला डालती है।

फरजी साह न ह्वै सके, गति टेढ़ी तासीर।

रहिमन सीधे चाल सों, प्यादो होत वज़ीर।।

रहीम जी इसमें शतरंज की गोटियों के माध्यम से यह बताना चाहते हैं कि जीवन में सीधे-सादे व्यक्ति ही उन्नति कर सकते हैं। देखो, फरजी गोट यानी वज़ीर, जो टेढ़ा भी चलता है, साह नहीं बन पाता है जबकि सीधा चलता हुआ प्यादा वज़ीर तक बन जाता है।

सरवर के खग एक से, बाढ़त प्रीति न धीम।
पै मराल को मालसर, एकै ठौर रहीम।।

सच्चे और झूठे प्रेमियों के प्रेम का वर्णन करते हुए रहीम जी करते हैं कि सरोवर में रहने वाले झूठे प्रेमी पक्षी एक सरोवर को छोड़कर दूसरे की शरण में चले जाते हैं, पर मानसरोवर में रहने वाला सच्चा प्रेमी हंस उसे छोड़कर कहीं नहीं जाता।

रहिमन नीच प्रसंग ते, नित प्रति लाभ विकार।
नीर चोरावै संपुरी, मार सहै घटिआर।।

रहीम जी करते हैं कि दुष्ट के संग से हररोज़ हानि होती है। जैसे पानी तो संपटी चुराती है, पर मार पास रखे घड़ियाल को सहन करनी पड़ती है। यानी जब घड़ियाँ नहीं थीं तो संपुटी से ही समय का पता चलता था। जब संपुटी का जल एक ओर से दूसरी ओर चला जाता था तो राजा के प्रहरी पास रखे घड़ियास पर हथौड़ा मारकर एक घण्टे का समय हो जाने की सूचना दे देते थे।

मानसरोवर ही मिलैं, हंस मुक्ता भोग।
सफरिन भरे रहीम सर, बक बालक नहीं योग।।

रहीम जी कहते हैं कि मानसरोवर में रहने वाले हंस मोती चुगते हैं जबकि छोटे तालाबों में रहने वाले बगुलों के बच्चे तुच्छ, दुर्गंधयुक्त मछलियाँ खाते हैं। कहने का भाव है कि महान आत्माओं की संगत में ही सही वस्तु की प्राप्ति हो सकती है।

यद्यपि अवनि अनेक हैं, कूपवंत सरिताल।

रहिमन मानसरोवरहिं , मनसा करत मराल।।

रहीम जी कहते हैं कि चाहे इस अवनि पर, धरती पर अनेक कुँए और तालाब हैं, पर हंस का दिल मानसरोवर में ही लगता है। भाव यह है कि जिसकी जहाँ रुचि होती है, उसे वही प्रिय लगता है।

रहिमन ठठरि धूरि की, रही पवन ते पूरि।
गाँठि युक्ति की खुल गई, रही धूरि की धूरि।।

रहीम जी कहते हैं कि यह शरीर रूपी ठठरीर मिट्टी की बनी है और पवन से चल रही है। जब यह गाँठ खुल जायेगी अर्थात जब पवन इस शरीर से निकल जायेगी तो फिर यह मिट्टी ही हो जायेगा।

आप ना काहू काम के, डार पात फल फूल।
औरन को रोकत फिरै, रहिमन पेड़ बबूल।।

दुष्टों के स्वभाव को इंगित करते हुए रहीम जी कहते हैं कि जिस तरह बबूल के पेड़ पर लगने वाले पत्ते, फल, फूल, शाखाएँ आदि सब बेकार होती हैं, किसी काम नहीं आतीं और यह पौधा पास में उगने वाले दूसरे पौधों को भी रोकता फिरता है, इसी तरह दुष्ट भी ना तो खुद किसी के काम आते हैं और ना ही दूसरों को दुनिया के काम आने देते हैं।

सबको सब काऊ करै, कै सलाम कै राम।
हित रहीम तब जानिए, जब कुछ अटकै काम।।

रहीम जी कहते हैं कि ऐसे तो सभी मिलने पर '**सलाम**' कह देते हैं, पर इससे वे मित्र नहीं जाते, अपने हितैषी नहीं हो जाते। इस बात का पता तो तब चलता है जब कोई मुसीबत आती है, क्योंकि तब दिखावटी पास भी नहीं आते।

रहिमन असमय के परे, हित अनहित ह्वै जाय।

बधिक बधै मृग बान सों, रुधिर देत बताय।।

रहीम जी कहते हैं कि बुरे समय में अपने हितकारी भी शत्रु बन जाते हैं। देखो, हिरण शिकारी के बाण से आहत होने के बाद जान बचाकर छिप जाता है, पर उसका अपना ही खून, जो शरीर से गिरता है, शिकारी को उसका पता बता देता है और शिकारी खून का पीछा करते-करते उस तक पहुँच जाता है, उसे पकड़ लेता है।

समय लाभ सम लाभ नहिं, समय चूक नहीं चूक।
चतुरन चित रहिमन लगी, समय चूक की हूक।।

रहीम जी कहते हैं कि अवसर का लाभ उठाना चाहिए। अवसर के लाभ के समान कोई लाभ नहीं है और अवसर चूक जाने के समान कोई चूक नहीं है। इसलिए जो चतुर लोग होते हैं, यदि वे अवसर का लाभ नहीं उठा पाते हैं तो बाद में उन्हें यह बात बड़ा दुख देती है।

रहिमन रजनी ही भली, पिय सों होय मिलाप।
खरो दिवस केहि काय को, रहिबो आपुहि आप।।

रहीम जी कहते हैं कि दुखरूपी वो रात ही अच्छी है, जिसमें प्रिय से मिलन होता है। दूसरी ओर सुख रूपी दिन किसी काम का नहीं है, जिसमें प्रिय मिलन नहीं हो पाता। भाव यह है कि दुख ही प्रभु रूपी, गुरु रूपी प्रियतम की याद दिलाता है।

चश्म दिल से देख तू

उठ जाग ही मोरी, सुरति सुहागिन जाग री।
क्या तू सोय मोह में, उठ के भजन में लाग री।।

हम सब एक बात ज़रूर कह रहे हैं कि मुक्ति प्राप्त करनी है, जन्म-मरण से छुटकारा पाना है। इसका मतलब है कि हम सब जाने-अनजाने एक बात स्वीकार कर रहे हैं कि हम सब बँधे हैं। यह कैसा बंधन है! कौन बाँधा है हमें! जहाँ तक मुक्ति का सवाल है तो इसका साफ़-साफ़ मतलब है कि बंधन है। यह तो तय है कि हम सब बंधन में हैं, पर बाँधा किसने!

बहु बंधन ते बाँधिया, एक विचारा जीव।
जीव विचारा क्या करे, जो न छुड़ावे पीव।।

लगता है कि सब एक गहन बंधन में हैं। यह आत्मा निःसंदेह शातिर ताक़तों के हाथ में बँधी है। व्यक्ति के अंदर व्यक्तित्व ही दिखाई दे रहा है, आत्मा का अस्तित्व नहीं दिख रहा। छिप गयी है आत्मा।

आत्म ज्ञान बिना नर भटके, क्या मथुरा क्या काशी।

कैसे फँसी है आत्मा! शास्त्राकारों के अनुसार तो यह पाँच तत्वों से परे है, यह स्त्री-पुरुष से परे है। **'नहीं उपजे नहीं बिनशे कबहूँ........।'** किसी देश-काल-अवस्था में इसका नाश नहीं है। ऐसी आत्मा बंधन में है। देखते हैं पता चलता है कि संसार का प्रत्येक व्यक्ति अपने को पंच भौतिक शरीर मान कर चल रहा है। यह गंभीर विषय है। **'एक ना भूला, दो ना भूले, जो है सनातन सोई भूला।'** यह संसार ही भूल-भुलैया है। सब भूले हुए हैं। **'कहैं कबीर किसे समझाऊँ ....।।'** सभी शरीर का जीवन जिये जा रहे हैं, आत्म-तत्व की पहचान करने की कौशिश कोई नहीं कर रहा है, कोई ऐसा नहीं मिल रहा है जो आत्मा बन कर जिए। व्यक्ति का व्यक्तित्व देखें तो उसमें काम, क्रोध आदि त्रुटियाँ नज़र आ रही हैं। राग-द्वेष, जो आदमी में दिख रहा है, वो भी कतई आत्मा की वृत्तियाँ नहीं हो सकती हैं। इनके बीच आत्मा दब गयी है। मनुष्य का व्यवहार बड़ा अटपटा लग रहा है। लग रहा है कि ज़रूर यह मनुष्य शातिर शक्तियों के हाथ में है। सब भूले हुए हैं। फिर आत्मा की

पहचान क्या है ! आत्मा किन सिद्धांतों से दबी है ! आत्मा को छुटकारा कैसे मिले?

बहु बंधन ते बाँधिया, एक विचारा जीव।
जीव विचारा क्या करे , जो न छुड़ावे पीव।।

पहले हमें आत्मा के रूप को समझना होगा। कैसी है आत्मा! आप देखते हैं, महसूस करते हैं कि 24 घण्टे मन आपके ध्यान को, आपकी सुरति को भटका रहा है । यही तो है आत्मा। यह तो स्त्री-पुरुष से परे है, भूख-प्यास से इसका कोई संबंध नहीं है । ऐसी आत्मा परेशान घूम रही है । आत्मा भ्रमित हो गयी है-मेरा घर, मेरे बच्चे, यह केवल अनुभूति है । इसका मतलब, हमारे ध्यान को मन उलझा रहा है । कभी-कभी आप कहते भी हैं कि महाराज, यह मन टिकता नहीं है । यानी यह एकाग्र नहीं होता है । सभी मत-मतान्तर भी तो ध्यान को एकाग्र करने की बात कह रहे हैं । इसका क्या मतलब है ! इससे क्या फायदा है ! यानी मन की गतिविधियों को रोकना और शुद्ध आत्मरूप की अनुभूति करना। हमारा ध्यान बेकार की चीज़ों में घूम रहा है । यही है बंधन। 24 घण्टे में एक पल भी स्थिर नहीं है आत्मा। ध्यान रूपी आत्मा को अंदर में निवास करने वाली शैतानी ताक़तें भटका रही हैं ।

कभी-2 आप फैसला करके बैठते हैं कि ध्यान में इतनी देर बैठना है । आप चाहते हैं कि एकाग्र होना है । आप चाहते हैं कि मन इधर-उधर न जाए। आप चाहते हैं कि मन की क्रियाएँ न हों। पर जब आप बैठते हैं तो अगले ही पल एक चीज़ होती है, आपकी एकाग्रता भंग हो जाती है । आपने नहीं सोचा। थोड़ा-सा चिंतन करेंगे तो अंदर के शत्रु बड़ी आसानी से समझ आने लगेंगे। साहिब तो कह रहे हैं-

चश्म दिल से देख तू, क्या-2 तमाशे हो रहे ।
दिल सतां क्या-2 हैं तेरे , दिल सताने के लिए।
ध्यान औरों का उठा, उसको बिठाने के लिए।

एक दिल लाखों तमन्ना, उसपे भी ज़्यादा हवस।
फिर ठिकाना है कहाँ, उसको बिठाने के लिए।

यानी अंदर की आँख से थोड़ा देखेंगे तो पता चलेगा कि शरीर के अंदर बड़ी हानियाँ हो रही हैं। ज़रूर कुछ ऐसी चीज़ें हैं, जिनके कारण आत्मा अपने स्वरूप को नहीं जान पा रही है। ब्रह्म स्वरूपी आत्मा का अस्तित्व शरीर में पता नहीं चल रहा है।

बहुत से बंधनों से यह आत्मा बँधी है। यह बंधन कैसा है? यह समझना, इससे छुटकारा पाना आसान काम नहीं है। विरोधी ताक़तें साधारण नहीं हैं। कोई भी इनसे छूट नहीं पा रहा है। **'भव दरिया है अगम अपारा, तामें डूब गयो संसारा।'**

'पार लगन को हर कोई चाहे, बिन सतगुरु कोई पार न पावे।' सभी शरीर के बंधन में बँधे हैं और जहाँ तक शरीर के बंधन का प्रश्न है, वहाँ तक हर आदमी आ रहा है–क्या बुद्धिजीवी, क्या यती, क्या सन्यासी, क्या वैज्ञानिक। पर अचरज है कि किसी को यह बंधन समझ नहीं आ रहा है, दिखाई नहीं दे रहा है। आज भौतिक विज्ञान बड़ी तरक्की पर है, बाहर कई खोजें कर रहा है, पर पलट कर भीतर खोज नहीं कर रहा है। **'संतो घर में झगड़ा भारी।'** इसका मतलब है कि आत्मा को भ्रमित करने वाली ताक़त दिखाई नहीं दे रही है, समझ नहीं आ रही है। साहिब कह रहे हैं कि यह ताक़त मन है।

जीव के संग मन काल रहाई, अज्ञानी नर जानत नाहीं।

आत्मा को बाँधने वाली ताक़त को देखना होगा। जैसे अमेरिका ने ईराक की संचार व्यवस्था को सीज़ कर दिया था, इसी तरह आत्मा की शक्तियाँ काल-पुरुष ने सीज़ कर दी हैं। आत्मा अपने धर्म के अनुकूल नहीं चल पा रही है। यह बात मामूली नहीं है।

तो आत्मा को भ्रमित करने वाली सत्ता है–मन। मन से ही सब संकल्प-विकल्प हैं। शास्त्रों से भी मिल रहा है कि संकल्प-विकल्प मन से है, आत्मा से नहीं, और संसार का हरेक व्यक्ति संकल्प और इच्छा

के अनुकूल ही कर्म कर रहा है। मनुष्य का चित्त पर नियंत्रण नहीं है, बुद्धि पर नियंत्रण नहीं है, अहंकार पर नियंत्रण नहीं है। कभी-2 ऐसी इच्छाएँ उठ जाती हैं, जो विनाशकारी हैं, अनर्थकारी हैं। ऐसा क्यों? इच्छाएँ अनादि हैं। किसी का भी उनपर नियंत्रण नहीं है। व्यक्ति को फिर मन की इच्छा के अनुसार ही कर्म करना पड़ रहा है। व्यक्ति इच्छाएँ कर रहा है और नियंत्रण भी नहीं कर पा रहा है, चाह कर भी रोक नहीं पा रहा है। यानी शरीर में कुछ प्रकियाएँ ऐसी हो रही हैं, जिनकी ख़बर इंसान को नहीं है।

कभी-2 मैं कहता हूँ कि एक भी मनुष्य बुद्धिमान नहीं देखा। क्योंकि मैं मानता हूँ कि जब तक इन पर नियंत्रण नहीं है, मनुष्य निर्मल नहीं हो सकता है, बुद्धिमान नहीं हो सकता है। अनचाहे भी इच्छाएँ आ जाती हैं, जिनकी ख़बर इंसान को बिलकुल भी नहीं है। कुछ कह रहे हैं कि इच्छा ही जीवन है। नहीं! ये ही तो बंधन हैं। हम मनोरंजन करना चाहते हैं, पर नहीं, हमें मनोभंजन करना है।

चाह मिटी चिंता मिटी, मनवा बेपरवाह।
वो ही शाहनशाह है, जिसको नाहीं चाह।।

इस मन में इतनी ताक़त है कि हरेक इच्छा को पूर्ण करने के लिए प्रेरित करता है, मजबूर करता है। शरीर के सब अंग उस इच्छा को साकार करने में जुट जाते हैं। इसका मतलब है कि इच्छाओं की पूर्ति के लिए हमारे शरीर के अंग दास की भाँति काम कर रहे हैं। इस मन को कोई समझ नहीं पा रहा है। **'जीव के संग मन काल रहाई, अज्ञानी नर जानत नाहीं।'** जीव के साथ मन रूपी काल रह रहा है। मन ही काल है, मन ही निरंजन है।

मन ही सरूपी देव निरंजन, तोही रहा भरमाई।
हे हंसा तू अमर लोक का, पड़ा काल बस आई।।

बड़े चुपके से मन ने आत्मा को भ्रमित किया। इस मन के चार

रूप हैं। मन का दायरा बहुत बड़ा है। जब यह संकल्प करता है तो इसे मन कहते हैं, जब यह निश्चय करता है तो इसे बुद्धि कहते हैं, जब याद करता है तो इसे चित्त कहते हैं, जब क्रिया करता है तो इसे अहंकार कहते हैं। मन का दायरा बड़ा तगड़ा है। इसे दुनिया के लोग समझ नहीं पा रहे हैं। साहिब सतर्क कर रहे हैं–**'तेरा बैरी कोई नहीं, तेरा बैरी मन।'** इतने बड़े दुश्मन से कोई सावधान नहीं है। सभी इसी की इच्छानुसार काम करते जा रहे हैं। उदाहरण के लिए, कोई कमरे बना रहा है। पहले मन इच्छा करता है, फिर मनुष्य जुट जाता है उसे साकार करने में। आत्म-देव गुलाम की तरह चेष्ठा किये जा रहा है। जीवन में आप जो भी इच्छाएँ कर रहे हैं, आत्मा की नहीं हैं।

यह मन बड़ा गहरा है। इसके दायरे के अंदर बड़े-बड़े ऋषि-मुनि हैं। सबने नियंत्रण करने का प्रयास किया, नहीं कर पाए। लोग कह रहे हैं–भूत-भूत। डरे जा रहे हैं। भाइयो! यह मन बहुत बड़ा भूत है। आपके दो हाथ हैं, फिर पाँच-2 उँगलियाँ हैं। इस मन के काम, क्रोध आदि पाँच हाथ हैं। फिर इनकी आगे उँगलियाँ भी हैं। सबको उनसे मरोड़े जा रहा है मन। कोई इसकी थाह नहीं पा रहा है। जितना भी साजो-सामान शरीर में है, एक छल है, एक धोखा है, आत्मा को बाँधने वाली चीज़ें हैं। आत्मा ने खुद को शरीर मान लिया है। इसी शरीर के कारण इसे कष्ट सहने पड़ रहे हैं।

देह धरे का दण्ड है, भुगतत हैं सब कोय।
ज्ञानी भुगते ज्ञान करि, मूरख भुगते रोय।।

भाइयो! मन का दूसरा रूप बुद्धि भी बड़ा ख़तरनाक है। यह बहुत बड़ा धोखा है। आप कहेंगे कि यह क्या कह रहे हैं! यह सिस्टम कोई समझ नहीं पा रहा है। सब मिलाकर अपने आपसे परिचित नहीं है। बुद्धि कभी भी आत्म-कल्याण के रास्ते पर नहीं चलेगी, मन की इच्छाओं में ही आगे आयेगी। बुद्धि क्या है? मन की दासी। केवल मन के संकल्प अनुसार चलती है। बुद्धि कभी आत्मा के कल्याण की ओर प्रेरित नहीं

करती है। इनकी साँठ-गाँठ है। मन की इच्छाओं की पूर्ति के लिए ही यह क्रियाशील होती है। मनुष्य कभी-2 पाप-कर्म करने का फैसला करता है, कभी चोरी, कभी जुआ, कभी झूठ। यानी यह बुद्धि अच्छी नहीं है। केवल जगत के पदार्थों में ही उलझाती है यह बुद्धि। आत्मा कोई मामूली ताक़तों के बीच में नहीं फँसी है। मन ने कहा, आम खाना है। इस पर बुद्धि फैसला करती है कि पैसा है या नहीं, कहाँ से लें। यह इस ओर लग जायेगी, पर भक्ति भी करनी है, इस ओर नहीं लगेगी।

एक-एक रोम आत्मा को भ्रमित करने वाला है। भाइयो! तीसरा है चित्त। आदमी इस नेटवर्क को समझ नहीं पा रहा है। यह भी मन का सहायक है। यह भी आत्म-कल्याण में सहायक नहीं है। चित्त नाम-सुमिरन में नहीं लगने वाला कभी भी। चाहे-अनचाहे यह अन्य-2 बातें याद दिला देता है। फलाने ने गाली दी थी, फलाने ने क्या कहा था! बस इसी ओर। यह भी भटकाता है, आपको दूसरी ओर ले जाता है। चित्त हमें डाइवर्ट क्यों कर रहा है! हमें मुसीबत में क्यों डाल रहा है! इसका काम ही यही है। इस तरह मन ने आत्मा को भ्रमित किया हुआ है।

बाजीगर का बांदरा, ऐसा जीव मन साथ।
नाना नाच नचाय के, राखे अपने हाथ।।

यह नाना नाच नचा रहा है। 24 घण्टे आत्मा इन्हीं में घूम रही है। कभी इच्छाओं के दौर में, कभी फैसले में, कभी याद में........। चाहे आदमी चाहे, ज़ोर नहीं चल रहा है। यह मन वही है, जिसकी इच्छाओं की पूर्ति के लिए आदमी पल-पल प्रयत्न किये जा रहा है, जुटा हुआ है। किसी को भी अपने चित्त पर कण्ट्रोल नहीं है। आप ध्यान में बैठें तो यह एकाग्र नहीं होने दे रहा है। ध्यान आत्मा है। यदि यह एकाग्र हुई तो सब खेल नज़र आने लगेंगे। इसलिए यह ऐसा नहीं होने दे रहा है। मन, बुद्धि का निग्रह नहीं हो रहा है। तभी तो साहिब वाणी में कह रहे हैं-

'तेरा बैरी कोई नहीं, तेरा बैरी मन।'

अर्जुन ने वासुदेव से कहा कि वायु की गठान नहीं बाँधी जा

सकती है, पर आप कहेंगे तो प्रयत्न करूँगा। समुद्र का मंथन करने के लिए कहोगे तो प्रयास कर लूँगा, पर मन पर नियंत्रण का प्रयास भी नहीं करना चाहूँगा। मैं बहुत प्रयास करके हार चुका हूँ, इसलिए ऐसा करने के लिए मत कहो। मन-माया का जाल रस्सियों का नहीं है। यह जाल काम-क्रोध का है। आदमी इनको परख नहीं पा रहा है और इन्हीं में उलझे जा रहा है। मन पूरी दुनिया को इनसे मारे जा रहा है। बड़े-2 ऋषि-मुनि भी इसे समझ नहीं पाए। साहिब ने वाणी में बड़ा सुंदर कहा-

काम प्रबल अति भयंकर, महा दारुण काल।
गण गंधर्व सुर नर मुनि, सबै कीन बेहाल।।

इस काम से भी मन पूरे तीन-लोक को नचा रहा है। तभी तो कह रहे हैं-

चश्म दिल से देख तू, क्या-2 तमाशे हो रहे ।
दिल सतां क्या-2 हैं तेरे, दिल सताने के लिए........।।

फिर **'काम से अधिक क्रोध प्रचण्डा, जा डर त्रासे नौ खण्डा।'** जब क्रोध आता है तो आदमी को हैवान बनाकर बुद्धि का नाश कर देता है। क्रोध का दौरा सबसे ख़तरनाक है। मुँह में झाग, शरीर में तेज़, दिमाग़ में हिंसा......। परम शैतान बना देता है। जब तक ये काबू नहीं आयेंगे, कुछ नहीं हो सकता है। बड़े-2 तपस्वी भी समझ नहीं पाए। भृगु ऋषि ने बड़ा तप किया, पर क्रोध में आ गये और विष्णु जी के सीने में लात मारी। दुर्वासा ऋषि इतना महान था, उसे भी क्रोध आ गया और 52 कोटि यादवों को समाप्त कर दिया। सोचो! इतने बड़े-2 महारथियों का यह हाल है। तीसरा है लोभ। **'बुरा लोभ ते और ना कोई।।'**

कामी नर बहुते तरे, क्रोधी तरे अनन्त।
लोभी बंदा ना तरे, कहैं कबीर सिद्धन्त।।

इस लोभ का नेटवर्क भी बड़ा ख़तरनाक है। नारद जी भी इसके वशीभूत हो गये। इसी कारण मनुष्य ठगी, बेईमानी करता है। फिर

इसके पुत्र-पोते भी हैं। लोभ से ही हिंसा का जन्म होता है। आत्मा इनके जाल में है। इस शरीर के अंदर बड़े-2 शत्रु बैठे हैं। **'अनहद लूट होत घट भीतर, घट का मरम ना जाना।'** फिर मोह तो सबका राजा है। इसी कारण भाई-बहन, पुत्र आदि को सत्य मान रही है आत्मा। बाकी के लिए नहीं सोचता है, केवल **'मेरे बच्चे।'** फिर इनसे भी बड़ा गर्व। ये एक-से-एक बढ़कर हैं।

सहज माया का त्यागना, सुत वित्त अरु नारि।
मान बढ़ाई ईर्ष्या, दुर्लभ तजना इह।।

बड़े-2 तपस्वियों ने तप किया, पर यह काबू नहीं आया। कोई इसे चीन्ह नहीं पाया। यह आत्मा की ताक़त से ही सब काम करवा रहा है। **'आपा को आपा ही बंधयो।'** आत्मा स्वयं बंधन में आ गयी है। मन अपनी इच्छाओं की पूर्ति आत्मा से करवा रहा है। मनुष्य ने चोरी की तो क्या आत्मा शामिल नहीं हुई! बिलकुल हुई शामिल। पूरी-2 शामिल हुई। आत्मा अपने को भूल गयी। आत्मा अपने को मन समझने लगी। **'जैसे सुनहा काँच महल में भरमत भूँक परो।'** कुत्ते में अज्ञान शीशे के कारण आया। इसी तरह आत्मा में माया के कारण अज्ञान आया। **'जो केहरि बपु निरखि कूप-जल, प्रतिमा देख परो।'** जैसे शेर ने अपने विनाश के लिए अपनी ताक़त लगायी, आत्मा भी अपने विनाश के लिए अपनी ताक़त लगा रही है। **'मरकट मूठ स्वाद न बिसरै, घर-2 नटत फिरो।'** बंदर को पकड़ने के लिए मदारी लोग ज़मीन में सुराही गाड़कर अंदर चने रखते हैं। बंदर बड़ा शौकीन है, वो आता है, सूँघता है और हाथ अंदर डाल देता है, चने की मुट्ठी भर लेता है। खाली हाथ तो अंदर चला जाता है, पर भरी हुई मुट्ठी बाहर नहीं आ पाती है और वो सोचता है कि किसी ने पकड़ लिया है। इस तरह आत्मा अज्ञान के कारण पूरी ताक़त से अपने को पकड़े हुए है। **'कहैं कबीर नलनी के सुग्गा, तोही कौने पकरो।'** लोगों ने सोचा, कर्म करो तो बच पायेंगे। नहीं!

चाहे जाओ मथुरा, चाहे जाओ काशी।
हृदय कपट की, गाँठ ना जासी।।

इन सब साधनों से कुछ नहीं होने वाला। **'कितने तपसी तप कर डारे, काया डारी गारा। गृह छोड़ भये सन्यासी, तऊ ना पावत पारा।।'** कोई भी मन के जाल से अपनी ताक़त से नहीं निकल सकता। **'नाम बिना पावे नहीं, कोटिन करे उपाय।'**

लोगों ने सोचा, शायद यह 52 अक्षरों वाला नाम है। जैसे कल्लू, राजू, संजय आदि नाम तो पुकारे जा सकते हैं, पर वो नाम ऐसा नहीं है, वो वाणी का विषय नहीं है। जिस दिन गुरु नाम देता है तो मन के नेटवर्क को अलग करके अपना नेटवर्क दे देता है। इस पर कह रहे हैं–

जब मैं था तो गुरु नहीं, अब गुरु हैं मैं नाहिं।
प्रेम गली अति साँकरी, जा में दो ना समाहिं।।

नाम के साथ कुछ शक्तियाँ आप में रोपित कर देता है। जब ये शक्तियाँ आपमें निवास करने लगती हैं तो मन का पूरा नेटवर्क समझ आने लगता है। जैसे ऊपर से पत्थर गिरता आ रहा हो और हमें पता ना चले तो सीधा सिर पर आ गिरेगा, पर यदि हम चेतन होंगे तो बच जायेंगे। जब नाम की ताक़त आती है तो काम, क्रोध आदि की ताक़त नहीं चलती, आत्मा सहयोग देना बंद कर देती है। तब ऐसी अवस्था हो जाती है–

मन जाता है जान दे, गहके राख शरीर।
उतरा पड़ा कमान से, क्या कर सकता तीर।।

मन को जाने ना दो, पर न माने तो कोई बात नहीं, जाने दो, पर शरीर को न जाने दो। फिर कुछ नहीं कर पायेगा। इसका काम शरीर की ताक़त से ही होता है। इस तरह आत्मा को चेतन कर देता है गुरु। आप चाहे गफलत में हैं, वो सतर्क है। जहाँ भी गलत होगा, फौरन एक

जाका गुरु है गिरही, गिरही चेला होय।
कीच कीच के धोवते, दाग न छूटे कोय॥

चेतना आएगी, आपको समझा देगी। फिर अंदर की आँख खुल जाती है। ऐसे में आप मन से सावधान रहते हैं। **'ताको काल क्या करे, जो आठ पहर हुशियार।'**

गाड़ी ख़राब होती है तो मैकेनिक के पास जाते हैं। वो इंजीनियर है। गुरु आपके अंदर के मत्सरों को काबू करने वाला इंजीनियर है। जब तक ये काबू ना हों, आदमी बुद्धू है। **'नाम बिना हृदय शुद्ध ना होय। कोटिन भाँति करे जो कोय।।'** इसलिए–

जा घट नाम ना संचरे, तिसको जान मशान।
जैसे खाल लुहार की, साँस लेत बिनु प्राण।।

जाका गुरु है आँधरा

जाका गुरु है आँधरा, चेला खरा निरंध।
अंधे को अंधा मिला, पड़ा काल के फंद।।

ऑल इण्डिया रेडियो में मेरा प्रोग्राम था, एक रपोर्टर ने मुझसे बड़ा प्यारा सवाल किया, पूछा–महाराज! क्या हम गुरुओं के चंगुल से क भी छूट पायेंगे? उसने सवाल बड़ा प्यारा किया। मैंने कहा–बेटे! तुमने अनजाने में बड़ा अच्छा सवाल कर दिया है, कहीं तुममें मानव-कल्याण की भावना भी छिपी है। सुनो! आज शिक्षा के क्षेत्र में बड़ा विकास हो चुका है, फिर भी अपने बच्चों को पढ़ाने के लिए हम अध्यापक की ज़रूरत महसूस करते हैं। अध्यापक की ज़रूरत पहले भी थी, अब भी है और आगे भी रहेगी। इस तरह जब तक दुनिया रहेगी, गुरु का महत्व रहेगा। पर जैसे हम अपने बच्चों के लिए एक अच्छा स्कूल ढूँढ़ते हैं, अच्छे अध्यापक ढूँढ़ते हैं, इसी तरह हमें एक सच्चे गुरु को ढूँढ़ना होगा। क्योंकि–

बहुत गुरु हैं अस जग माहीं। हरें द्रव्य दुख कोऊ नाहीं।।
ताते प्रथम परीक्षा कीजै। ता पीछे गुरु दीक्षा लीजै।।

आज सत्संग, कथाओं का स्तर ऐसा हो गया है कि दो किस्से-कहानियाँ सुना दी कि नारद जी वहाँ गये, ऐसा-2 हुआ, हनुमान जी ने ऐसा-2 किया। फिर कुछ अंग्रेज़ी और कुछ संस्कृत के शब्द भी प्रभावित करने के लिए बोल देंगे। उसके बाद एक-दो चुटकले सुनाकर सबको हँसायेंगे यानी विदूषक वाला काम करेंगे। फिर खुद भी हँसेंगे। उसके बाद भावुक होकर रोने लगेंगे। साहिब कह रहे हैं–**'मन ही हँसे, मन ही रोवे.......।।'** अब सबको खुश करना है, कोई ग्राहक वापिस न जाए, इसलिए एक-दो भजन सुनायेंगे। इसके बाद कहेंगे, अब नाचना भी है।

खुद भी नाचेंगे और संगत को भी नचायेंगो। यह भक्ति नहीं है।

भक्ति होय नहिं नाचे गाये। भक्ति होय नहिं घंट बजाये।।
...विमल विमल गावें अरु रोवें। क्षण एक परम जन्म को खोवें।।
ऐसे साहिब मानत नाहीं। ये सब काल रूप के छाहीं।।

भक्तों का स्थान पाखण्डियों ने ले लिया। कोई कहता है कि जिसकी मरजी भक्ति करो, भूतों की भक्ति कर रहे थे तो छोड़ना नहीं, करते रहो, पर गुरु हमें मानना क्योंकि गुरु बिना गति नहीं है। यह तो वैसा ही है कि कोई डूब रहा है तो कहो, खाते रहो गोते। दुनिया तो भवसागर में डूब रही है, उसे सच्ची भक्ति का ज्ञान नहीं है। यदि वहीं रहने दिया तो बेकार है वो गुरु। सच्चा गुरु भवसागर में गोते खाती हुई दुनिया को नाम रूपी जहाज़ का सहारा देता है, उसे पाखण्ड से छुड़ाकर सत्य-भक्ति का मार्ग बताता है। पर यदि वो खुद अज्ञानी है, उसे सत्य-भक्ति का ज्ञान नहीं है तो फिर वो वही करेगा; कह देगा-जहाँ हो, वहीं रहो; जो कर रहे थे, करते रहो; डूब रहे थे तो डूब जाओ; जब तक डूब नहीं जाते, मुझे गुरु मानो, पैसा देते जाओ। कुछ तो सीधे-2 चंदा माँग लेते हैं। फलाने स्थान पर मूर्ति प्रगट होने वाली है, चंदा दो, पुण्य कमाओ। बस दुनिया को उलझा दिया उसने पाप-पुण्य में। साहिब तो कह रहे हैं-**'पाप पुण्य ये दोनों बेड़ी। इक लोहा इक कंचन केरी।।'**

भक्ति में जितना आज इंसान भटक रहा है, पहले कभी नहीं भटका था। भुलेखे में है पूरी दुनिया। सभी किसी-न-किसी धर्म, किसी-न-किसी पंथ से जुड़े हैं, वहाँ से नाम ले लेते हैं। एक मोहर लग जाती है, पर कोई बदलाव जीवन में नहीं आ पाता है। इंसान में छल-कपट बहुत बड़ गया है। काम वासना ने हरेक को पकड़ रखा है। अपनी स्त्री हो तो भी पराई स्त्री की तरफ जा रहा है। इसका मतलब है कि शैतानी ताकतें इसपर नाच रही हैं। कितना भी अपने को भक्ति में रमा ले, कोई लाभ नहीं। इंसान का स्तर इतना क्यों गिर गया! मुम्बई के शांति सम्मेलन

में भी मैंने यही कहा था कि थोथे भाषणों और कथाओं से मनुष्य में परिवर्तन कभी नहीं आ पायेगा। इंसान के अंदर की शैतानी ताक़तें बड़ी ख़तरनाक हैं। वे हावी हो चुकी हैं इंसान पर। हर इंसान तलाश में है कि कैसे पराई स्त्री मिल जाए, कैसे पराया मर्द मिल जाए। हमारे महान भारत देश के लोग चरित्र से गिर रहे हैं, बाकी किसकी बात करें! छोटे-2 बच्चे भी विषयों में लिप्त हो गये हैं। 7-8 साल पहले इंग्लैंड से एक टीम आई, उन्होंने सातवीं से 12वीं कक्षा तक के विद्यार्थियों पर शोध किया। पुरुषों की टीम ने लड़कों से जानकारी ली, उन्हें बहला-फुसला कर पूछा और स्त्रियों की टीम ने लड़कियों से जानकारी ली। परिणाम में पता चला कि इतनी कम उमर यानी 12-13 साल से 18-19 साल तक के लड़कों में 65 प्रतिशत लड़के संभोग कर चुके थे और 55 प्रतिशत लड़कियाँ इतनी कम उम्र में यह गंदा काम कर चुकी थीं। आज तो हालत और भी ख़राब है। जवान भटक रहे हैं, बूढ़े भटक रहे हैं। अख़बारों में आप चरित्र हनन होता पढ़ रहे हैं। संसार पतित होता चला जा रहा है। इन ताक़तों पर विचार से या तपस्या से काबू नहीं पाया जा सकता है, क्योंकि धार्मिक ग्रन्थों में प्रमाण मिलते हैं। साहिब कह रहे हैं-

काम प्रबल अति भयंकर, महादारुण काल।
यक्ष किन्नर गण गंधर्व, सबै कीन बेहाल।।

ज्ञानी पुरुष उसे देख लेता है। जो इस काम को देखकर बच जाए, वो ही तो भक्त है।

भग भोगें भग ऊपजै, भगते बचै न कोय।
कहैं कबीर भगते बचै, भक्त कहावै सोय।।

दुनिया नहीं बच पा रही है इससे, इसलिए तो कह रहा हूँ कि यह सब भक्ति नहीं है। हमारे अंदर भाषणों से, कथा-कीर्तन से बदलाव आने वाला नहीं है, केवल आध्यात्मिक ताक़त से ही मनुष्य में बदलाव

आ सकता है।

तो काम ने सबकी मति मार रखी है। जब भी काम का दौरा आता है तो एक बार तो उल्लू बनना ही पड़ता है, अपने को बेवकूफ़ बनाना ही पड़ता है। भाइयो! **'जहाँ भोग तहाँ योग विनाशा।'** कई घटनाएँ आपने सुनी होंगी। पराशर ऋषि ने हज़ार साल तप किया। भाइयो! 1000 साल तप करना कम नहीं है, बहुत है। आज तो इंसान की उम्र भी कम है। तो पराशर तपस्या करके घर वापिस आ रहा था। एक नदी पर पहुँचा तो मल्लाह की 15-16 साल की बेटी उसके लिए खाना लाई थी। मल्लाह खाने बैठा था। कहते हैं कि भोजन करते समय बीच में नहीं छोड़ना चाहिए। पर नाविक ने दूर से देखा कि पराशर आ रहा है, बेटी से कहा-मैं खाना खा रहा हूँ, अगर इसे इंतज़ार करवाया तो शाप दे सकता है, अनिष्ट कर सकता है, इसलिए तू इसे नदी पार करवा दे। तब नदियाँ बड़ी चौड़ी-2 होती थीं। तो जब आधी नदी पार कर ली तो पराशर में काम वासना आ गयी, उसने लड़की के आगे गंदा विचार रखा। लड़की ने कहा, आप तो पिता समान हैं, कैसी बात कर रहे हैं। पर उसमें काम आ गया था उस समय, इसलिए सोचने की ताक़त भी हीं रही। तब लज्जा भी नहीं रहती।

तन मन लज्जा ना रहे , काम बान उर साल।
एक काम सब वश किये, सुर नर मुनि बेहाल।।

तो पराशर आगे बढ़ा। लड़की अपने को बचाना चाहती थी, कहा-दिन में संभोग शास्त्रों में वर्जित है। पशु दिन में कर सकते हैं, पर मनुष्य के लिए वर्जित है। तो काम ने पशु ही तो बना दिया इतने बड़े तपस्वी को। लड़की ने कहा-सूर्य नारायण देख रहे हैं। पराशर के पास तपस्या का बल था, उसने कोहरा-ही-कोहरा कर दिया, सूर्य को ढक दिया। गुम हो गया सूर्य, पर लड़की अपने को बचाना चाह रही थी, कहा-जल देवता देख रहे हैं। ऋषि ने इच्छा की और जल को रेत से

ढक दिया। जल भी गुम हो गया। लड़की अभी भी बचने का प्रयास कर रही थी, बोली–मैं मछोदरी हूँ, मेरे शरीर से मछली की बदबू आती है। ऋषि ने तपस्या के बल से लड़की की देह महकदार बना दी, 12 योजन दूर तक उससे खुशबू निकलने लगी। देखो! कितनी ताक़त थी कि सूर्य को भी ढक दिया, जल को भी ढक दिया, लड़की की देह को भी सुवासित कर दिया, पर काम से नहीं बच सका। सोचो! यदि 1000 साल तप करने वाला काम से नहीं बच पाया तो आज इंसान की उम्र ही कितनी है। कितना भी उग्र तप क्यों न कर ले, कितने भी दान–पुण्य क्यों न कर ले, क्या बच पायेगा! कभी नहीं। शिवजी मोहिनी रूप पर मोहित हो गये।

संतो घर में झगड़ा भारी........।।

देवत्व सत् कर्म करता है। देवराज इन्द्र कामातुर हुआ और गौतम ऋषि की पत्नी अहिल्या के पास पहुँच गया। घोर तप करने पर इन्द्र पद की प्राप्ति होती है। कितनी चालाकी की, सुनो। रात्रि के समय गया। विषय–विकार का समय रात 12 से 3 बजे के बीच ही चुनता है मनुष्य। चोर भी यही समय चुनता है। गर्मियों में पौने चार बजे अमृत बेला हो जाता है और सर्दियों में पौन पाँच बजे। ऋषि मुनि अमृत बेले में ही उठकर स्नानादि करने नदी में जाते थे और फिर पूजादि करते थे। जब तक गौतम ऋषि घर में रहते, तब तक इन्द्र को मौका कैसे मिलता! तो इन्द्र ने चालाकी की, उसने गाय को अमृत बेले से बहुत पहले रंभाने को कहा, लालच भी दिया। तब घड़ियाँ नहीं थीं। मनुष्य मुर्गे की बाँग से या गाय के रंभाने से ही जगता था। ये अमृत बेले की सूचना देते थे। तो गाय बहुत पहले रंभाई। गौतम ऋषि उठे, ऊपर आकाश की ओर देखा तो शंका हुई, क्योंकि तारों से भी समय का ज्ञान होता है। इतने में इन्द्र ने मुर्गे को भी बाँग देने को कहा ताकि ऋषि को विश्वास हो जाए कि सुबह हो गयी है। तो मुर्गे ने भी बाँग दे दी। देखा ना, कितनी चारसौबीसी की। गौतम जी ने सोचा, सुबह हो गयी है, धोती उठाई और चल पड़े, गंगा

जी पर स्नान करने। वहाँ पहुँचे तो गंगा जी ने कहा–हे गौतम! वापिस जा, तेरे घर में धोखा हो रहा है। ऋषि घर आए तो देखा इन्द्र और चन्द्रमा

दोनों थे। ऋषि ने धोती चन्द्रमा पर दे मारी। वही चन्द्रमा पर दब्बा बन गया। फिर इन्द्र को शाप दिया कि सहस्रभग हो जाएँ। उसके शरीर में एक हज़ार भग द्वार हो गये। कहा–देखते रहो अब इन्हीं को। मुँह पर, टाँग पर.....सब जगह।

तो यह काम पड़ा ख़तरनाक है। नारद मुनि से बड़ा कोई मुनि नहीं, उन्हें भी नहीं छोड़ा। समझो भाई समझो। किसकी भक्ति से काबू पाओगे इन पर!

पिप्पलाद ऋषि ने भी बड़ी तपस्या की। जब वापिस लौट रहे थे तो रास्ते में एक पुरुष को अपनी स्त्री के साथ विहार करते देख काम से पीड़ित हो गये और स्त्री की खोज करने लगे। एक नदी पर राजा अनरण्य की परम सौंदर्यवान बेटी पद्मा को देखकर उसपर मुग्ध हो गये। ऋषि ने आस-पास के लोगों से उसका परिचय पूछा और अगले दिन राजा के दरबार में पहुँच गये और कन्या की माँग की, कहा–यदि नहीं दोगे तो सबको भस्म कर दूँगा। वाह! तपस्या से सबको भस्म करने की ताक़त भी आ गयी थी, पर काम जीता नहीं जा सका। पहले इंसान अच्छा था, विचार शक्ति भी अधिक थी, तब भी नहीं जीत पाया तो आज का मनुष्य गुरुओं के बताए मार्ग पर चलकर, अपनी कमाई से इस भवसागर से छूट पायेगा क्या नहीं! कभी नहीं हो पायेगा ऐसा। भुलेखे में हैं ऐसे सब गुरु और सब चेले। मुम्बई में भी मुझे सब गुरुओं के विचार सुन बड़ी हैरानी हुई थी कि किसी को भी ज्ञान नहीं था, एक को भी पता नहीं था कि जीव गंदा क्यों है और अच्छा कैसे हो सकता है, शैतानी ताक़तों से छूट कैसे सकता है। यदि एक काम से इतनी तपस्या करके नहीं छूट पाया तो फिर भवसागर से कैसे छूटेगा! **'भवसागर है अगम अपारा। तामें डूब गयो संसारा।।'** निरंजन के बड़े पहरे हैं यहाँ। केवल नाम की ताक़त से ही जीव छूट सकता है।

जहाँ काम तहाँ नाम नहिं, जहाँ नाम नहिं काम।
दोनों कबहु ना मिलै, रबि रजनी इक ठाम।।

कह रहे हैं, जैसे रात और सूर्य एक साथ नहीं हो सकते, इसी तरह काम और नाम भी एक साथ नहीं रह सकते। जहाँ नाम होगा, वहाँ काम नहीं टिक सकता; जहाँ काम है, वहाँ सच्चा नाम नहीं है। इन दोनों का मिलन संभव नहीं। पर यह नाम वो नहीं, जो आज के महात्मा दे रहे हैं। इसमें रहस्य है।

......तो राजा ने राजगुरु को यह बात बताई और उसके कहने पर कुल की रक्षा के लिए अपनी कन्या वृद्ध ऋषि को दे दी।

तो मैं कहना चाह रहा हूँ कि आज के गुरुआ लोग भी भुलेखे में हैं, इसलिए समाज भटक गया है भक्ति मार्ग से। पहले फिर भी कुछ हद तक ठीक था इंसान, पर अब तो बहुत बुरी हालत हो गयी है। पाप तो पहले भी था, पर इतना नहीं। अब पाप बहुत बढ़ गया है। काम, क्रोध ने मनुष्य को अंधा कर दिया है, उसकी सोचने की ताक़त भी कमज़ोर पड़ गयी है। मनुष्य गुरु भी ऐसा करना चाहता है जो उसकी बुराइयों को न छुड़ाए; जो कुछ मना न करे और भक्ति भी करने दे। बस, दुनिया में ऐसे ही गुरुओं की भरमार है, इसलिए तो पूरी दुनिया भक्त बन गयी है, पर पाप बढ़ता जा रहा है। दुनिया के अँधे लोग अँधों के सहारे संसार रूपी कुँए से निकलना चाह रहे हैं, पर हाल यह हो गया है कि–

आगे अंधा कूप में, दूजा लिया बुलाय।
दोनों डूबे बापुरे, निकसे कौन उपाय।।

सकल पसारा मेटकर, गुरु में देय समाय

जिह खोजत कल्पो भये, घटहि माहिं सो मूल।
बाड़ी गरब गुमान ते, ता ते पड़ गयो धूल।।

यह जीवात्मा अनादिकाल से परम-तत्व की प्राप्ति में भटक रहा है। उलझन क्या है? आख़िर व्यक्ति अनात्म चीज़ों में परम-तत्व की खोज क्यों कर रहा है? उसे भ्रमित किया गया है, इसलिए।

.......भव दरिया है अगम अपारा। तामें डूब गयो संसारा।।
.......पार लगन को सब कोई चाहे। बिन सतगुरु कोई पार न पावे।।

यह भवसागर असीम है। इसके अंदर पूरा संसार भ्रमित हो रहा है। पार होने का प्रयत्न तो सभी कर रहे हैं, पर बिना सद्गुरु के कोई पार नहीं हो सकता।

कुछ अपने शरीर में परम-तत्व की खोज कर रहे हैं। ये पाँच तरह से साधना कर रहे हैं-खेचरी, भूचरी, अगोचरी आदि। कुछ तो ऐसे ही लगे हैं, उन्हें तो मालूम ही नहीं है कि वे किस साधना से ध्यान कर रहे हैं और इस साधना से वे कहाँ तक पहुँचेंगे। उनको जानकारी नहीं है इसकी, पर वे लगे हैं। आख़िर इन साधनाओं में साधक कहाँ जा रहा है? साहिब एक स्थान पर बड़ा सुंदर शब्द कह रहे हैं-

संतो शब्दै शब्द बखाना।।
शब्द फाँस फँसा सब कोई, शब्द नहीं पहिचाना।
जो जिनका आराधन कीन्हा, तिनका कहूँ ठिकाना।।

सभी **'शब्द-शब्द'** की रट लगाए हुए हैं, पर शब्द को कोई पहचान नहीं सका। साहिब कह रहे हैं कि सबसे पहले परम-पुरुष ने पाँच शब्द पुकारे।

प्रथमै पूरण पुरुष पुरातन, पाँच शब्द उच्चारा।
सोहं सत् ज्योति निरंजन, ररंकार ओंकारा।।

यानी इनमें से कोई शब्द परमात्मा नहीं है बल्कि इन्हें पुकारने वाला परमात्मा है। आगे कह रहे हैं–

शब्दै निर्गुण शब्दै सर्गुण, शब्दै वेद बखाना।
शब्दै पुनि काया के भीतर, करि बैठे अस्थाना।।
ज्ञानी योगी पण्डित सबहीं, शब्दै में अरुझाना।
पाँच शब्द और पाँचों मुद्रा, काया पाँच ठिकाना।।

शब्द ही सगुण है, शब्द ही निर्गुण है। वेद भी शब्द की बात कर रहा है। वे शब्द इस काया में भी हैं। साहिब कह रहे हैं कि बड़े-2 योगी, ज्ञानी, पण्डित आदि इन्हीं शब्दों में फँसे हुए हैं। शरीर में पाँच स्थानों पर इन पाँचों शब्दों का निवास है। पाँच मुद्राओं द्वारा साधक इनकी ओर जाते हैं। आख़िर कैसे! साहिब आगे कह रहे हैं–

शब्द निरंजन चाचरि मुद्रा, सो है नैनन माहीं।
तेहि को जाना गोरख योगी, महा तेज है ताहीं।।

गोरखनाथ जी पहले नाम **'ज्योति निरंजन'** का जाप कर रहे थे। ध्यान और साधना क्या कर रहे थे? अपना ध्यान वे तीसरे तिल यानी आँखों के मध्य में रोकते थे। आज भी हमारे देश में बहुत लोग हैं, जो यह साधना कर रहे हैं, पर साहिब ने यहाँ ध्यान रोकने के लिए नहीं कहा। यहाँ ध्यान लगाने वाले कह रहे हैं कि इससे अलख ब्रह्म की प्राप्ति होती है, पर उन्हें यह पता नहीं है कि यहाँ भी काल का दायरा है। वे यहीं अटक जाते हैं, आगे नहीं जा सकते। यहाँ साधक सिद्धियाँ भी प्राप्त कर लेता है, पर यह कोई आत्मा का ठिकाना नहीं है। साहिब आगे कह रहे हैं–

शब्द ओंकार भूचरी मुद्रा, त्रिकुटी है अस्थाना।

व्यासदेव ताको पहिचाना, चाँद सूर्य सो जाना।।

व्यास जी **'ओंम'** का जाप करते हुए आज्ञाचक्र में ध्यान रोकते थे। इस मुद्रा से साधक को महाकारण देही की प्राप्ति भी हो जाती है, वो प्रज्ञावस्था में चला जाता है, विभिन्न लोक-लोकान्तरों को देख लेता है। पर यह भी तीन-लोक तक का खेल है। आगे कह रहे हैं-

सोहंग शब्द अगोचरि मुद्रा, भंवर गुफा अस्थाना।
शुकदेव ताको पहिचाना, सुन अनहद की ताना।।

शुकदेव जी सोहंग का जाप करते हुए अपना ध्यान धुनों में रखते थे और आनन्द की प्राप्ति करते थे। साहिब ने और संतों ने भी इन धुनों का अस्तित्व स्वीकार किया है, माना है, पर वे कह रहे हैं कि ये धुनें परमात्मा नहीं हैं। साहिब भी मान रहे हैं, धुनें हैं-

अनहद की धुन भँवरगुफा में, अति घनघोर मचाया है ।
बाजे बजें अनेक भाँति के, सुनि के मन ललचाया है ।।

तथा-

रस गगन गुफा में अजर झरै ।
बिन बाजा झनकार उठै जहँ, समुझि परै जब ध्यान धरै ।।

भँवर गुफा से उठती हुई ये धुनें सुषुम्ना में पहुँचती हैं। वहाँ ये धुनें बहुत तेज़ हो जाती हैं। दादू दयाल जी कह रहे हैं-

अनहद नाद गगन चड़ गरजा, तब रस भया अमीदा।
सुषमन शून्य सुरत महलौं नभ, आया अजर अकीदा।।

ब्रह्मानन्द जी भी इन धुनों के लिए कह रहे हैं-

अनहद की धुन प्यारी साधो, अनहद की धुन प्यारी रे ।
आसन पद्म लगा कर, कर से मूँद कान की बारी रे ।
झीनी धुन में सुरत लगाओ, होत नाद झनकारी रे ।

पहले पहले रिलमिल बाजे, पीछे न्यारी न्यारी रे ।
घंटा शंख बंसरी वीणा, ताल मृदंग नगारी रे ।
दिन दिन सुनत नाद जब बिकसे, काया कंपत शरीरे ।
अमृत बूँद झरे मुख माहीं, योगी जन सुखकारी रे ।
तन की सुध सब भूल जात है, घट में होय उजारी रे ।।

इस तरह अंदर में होने वाली धुनों के लिए सबने कहा, पर साहिब ने तथा संतों ने यह कभी नहीं कहा कि यही पराकाष्ठा है, इसलिए साहिब आगे साफ-साफ कह रहे हैं-

जाप मरे अजपा मरे, अनहद भी मरि जाय।
सुरति समानी शब्द में, उसको काल न खाय।।

फिर कौन-सा शब्द! यानी जिस शब्द की ओर इशारा कर रहे हैं, वो कोई और है, अनहद शब्द नहीं। तभी तो एक अन्य स्थान पर भी बड़ा ही सुंदर कह रहे हैं-

सोई सद्गुरु मोहिं भावै, जो नयनन अलख लखावै।
डोलत डिगे न बोलत बिसरे, जब उपदेश दृढ़ावै।
प्राण पूज्य किरिया से न्यारा, सहज समाधि सिखावै।
द्वार न रूँधे पवन न रोके, नहिं अनहद अरुझावै.....।।

'नहिं अनहद अरुझावै।' साफ-साफ ही तो कह रहे हैं कि अनहद धुनों में नहीं उलझा दे। इससे प्रमाणित हो रहा है, स्पष्ट पता चल रहा है कि साहिब इन धुनों से कहीं आगे की बात कह रहे हैं।

.....त्रिकुटी महल में आव जहाँ ओंकार है ।
आगे मारग कठिन सो अगम अपार है ।।
तहाँ अनहद की घोर होत झनकार है।
लागि रहे सिद्ध साधु न पावत पार हैं ।।....
ता ऊपर आकाश अमी का कूप है ।

अनन्त भानु प्रकाश सो नगर अनूप है ।।
तामे अक्षर एक सो सबका मूल है ।
कहों सूक्ष्म गति होय विदेही फूल है ।।
निःअक्षर का भेद हंस कोई पाइहैं ।
कहै कबीर सो हंसा जाय समाइहैं ।।

साहिब ने जिस शब्द की बात की, वो , निःशब्द है । ....तो आगे कह रहे हैं–

सत् शब्द सो उनमुनि मुद्रा, सोई आकाश सनेही।
तामे झिलमिल जोत दिखावे, जाना जनक विदेही।।

राजा जनक उनमुनि मुद्रा करते थे, अपना ध्यान सहस्रसार चक्र पर रोकते थे और अद्भुत संसार देखते थे, सोचते थे– यही है अनादि ब्रह्म। साहिब कह रहे हैं, नहीं! मामला आगे है। पाँचवीं मुद्रा के लिए कह रहे हैं–

ररंकार खेचरी मुद्रा, दसवाँ द्वार ठिकाना।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर देवा, ररंकार को जाना।।

इस तरह 10वें द्वार तक का ध्यान कहा। त्रिकाल में जितने भी ऋषि–मुनि, सिद्ध–साधक हुए, यहीं तक पहुँच कर अटक गये, पर साहिब ने इससे आगे कहा। बड़ा चौंकाने वाला शब्द कह रहे हैं–

पाँच शब्द औ पाँचों मुद्रा, सोई निश्चय माना।
आगे पूरण पुरुष पुरातन, उसकी ख़बर ना जाना।।
सिद्ध साधु त्रिदेवादि ले, पाँच शब्द में अटके।
मुद्रा साध रहे घट भीतर, फिर औंधे मुँह लटके।।

यानी सभी पाँच शब्द तक अटक गये। आगे कोई नहीं गया। आगे के लिए कह रहे हैं–

इसके आगे भेद हमारा, जानेगा कोई जाननहारा।
कहैं कबीर जानेगा सोई, जा पर कृपा सतगुरु की होई।।

दिल्ली जाना है तो पठानकोट से होकर जाना है। पर पठानकोट लक्ष्य नहीं, माध्यम है। योग का विरोध तो बेवकूफ़ी है, लेकिन शरीर योग वाला यह सोच ले कि परम-लोक में पहुँच जाऊँगा तो बेवकूफ़ी है, भूल है। अमर-लोक तो-**'बिन सतगुरु पावे नहीं, कोई कोटिन करे उपाय।'** इस तरह सुषुम्ना एक माध्यम है, लक्ष्य नहीं। कुछ कह रहे हैं कि सुषुम्ना ही सब कुछ है, पर नानक देव जी कह रहे हैं-

इड़ा पिंगला सुषुम्ना बूझे, आपे अलख लखावे।
उसके ऊपर साँचा सतगुरु, अनहद शब्द सुरति समावे।।

त्रिकाल में जितने भी ऋषि-मुनि हुए, निराकार की बात कही, तीन-लोक की बात कही, पर साहिब ने आगे की बात बतायी। गोरखनाथ पवन-योग कर रहे थे। कुछ अंदर में खोज करके सोचते हैं कि खोज हो गयी। नहीं! सुषुम्ना का ज़िकर तो साहिब ने भी किया है। साहिब ने तो सबकी बात की है, सबका मूल्य बताया है, सबकी सीमा बतायी है। सुषुम्ना को साहिब ने माध्यम माना है, लक्ष्य नहीं। तभी तो कह रहे हैं-

इंगला विनशै पिंगला विनशै, विनशै सुषुम्न नाड़ी।
जब उनमुनि की तारी टूटै, तब कहँ रही तुम्हारी।।

जो अनहद धुनों को ही परमात्मा समझ बैठते हैं, उन्हें साहिब ने निःशब्द शब्द का ज्ञान दिया यानी जिसमें कोई ध्वनि नहीं। जहाँ भी झंकारें हैं, वहाँ अनादि ब्रह्म की कल्पना नहीं की जा सकती। धुनें दो बिना नहीं हो सकतीं, इसलिए परमात्मा नहीं हो सकती हैं ये धुनें।

वायु में शब्द नहीं है। कहीं पेड़ से टकराई तो आवाज़ होती है, पर हवा खुद शब्द नहीं.......केवल टकराने से ही ध्वनि हुई। हवा शब्दहीन है। शब्द किसी से टकराकर ही उत्पन्न होगा, शरीर से टकराने से भी। कानों में भी साँय-साँय होता है यानी कान से टकराई हवा, तो भी शब्द हुआ। इश तरह धुनें कतई परमात्मा नहीं हैं।

पुरुष कहौ तो पुरुषे नाहीं। पुरुष भया माया की माहीं।।

शब्द कहौ तो शब्दै नाहीं। शब्द भया माया की छाहीं।।
दो बिना होय न अधर अवाज़ा। कहो कहा यह काज अकाजा।।

दो के बिना आवाज़ नहीं हो सकती, टकराने से ही आवाज़ है। जहाँ द्वैत है, वहाँ माया है।

हम इस सफ़र में आगे चल रहे हैं। इड़ा-पिंगला में रहस्य हैं। इनके लय होते ही सुषुम्ना का सृजन है। पर इड़ा-पिंगला लक्ष्य नहीं है। पूर्ण गुरु के सान्निध्य में ध्यान करोगे तो पता चलेगा सारा रहस्य। साहिब एक जगह कह रहे हैं-

सकल पसारा मेट कर, मन पवना कर एक।
ऊँची तानो सुरति को, तहाँ देखो पुरुष अलेख।।

कह रहे हैं कि सब तरफ से ध्यान हटा लो। खेल सुरति का है। पर इड़ा-पिंगला लय हुए बिना सुषुम्ना नहीं खुल सकती।

चकमक पथरी रहत एक संगा,
उठत नहीं चिंगारी।।

चकमक पत्थर पड़े रहें, पर संघर्ष बिना आग उत्पन्न नहीं हो सकती है। सुषुम्ना के अंदर ही उस दुनिया का गेट है। उसके लिए इड़ा-पिंगला का लय होना ज़रूरी है। पर सुषुम्ना में ही अटके नहीं रहना है।

इंगला विनशे पिंगला विनशे, विनशे सुषुम्न नाड़ी।
जब उनमुनि की तारी टूटे, तब कह रही तुम्हारी।।

जब शरीर ही नष्ट हो जायेगा तो इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना भी नष्ट हो जायेंगी, तब कहाँ ध्यान रुकेगा! अतः ध्यान कहाँ रोकें, यह भी साहिब कह रहे हैं। **'ऊँची तानो सुरति को, तहाँ देखो पुरुष अलेख।'** शीश से सवा हाथ ऊपर ध्यान को एकाग्र करने को कह रहे हैं। क्योंकि सुरति की नाल वहीं पर है। पर यदि ऐसा ना हो सके तो भी कोई बात नहीं। धर्मदास जी ने साहिब से पूछा कि परम-तत्व की प्राप्ति कैसे करें! साहिब ने एक ही शब्द में सारा रहस्य कह दिया, कहा-गुरु में सुरति

लगा देना, बाकी काम वो खुद कर लेगा।

सकल पसारा मेट कर, गुरु में देय समाय।
कहैं कबीर धर्मदास से, अगम पंथ लखाय।।

बीजक के प्यारे शब्द

समुझि न परलि नाम की कहानी

हरनाकुस रावन गै कंसा। क्रेसन गये सुर नर मुनि बंसा।।
ब्रह्मा गये मरम नहिं जाना। बड़ सभ गये जे रहल सेयाना।।
समुझि न परलि नाम की कहानी। निरबक दूध कि सरबक पानी।।
रहिगौ पंथ थकित भौ पवना। दसो दिसा उजारि भौ गवना।।
मीन जाल भौं ई संसारा। लोह के नाउ पखान के भारा।।
खेवै सभै मरम हम जानी। तइयो कहै रहै उतरानी।।

साहिब कह रहे हैं कि हिरण्यकश्यप, रावण, कंस, कृष्ण जी, देवता, मनुष्य, मुनि, ब्रह्मा जी तक सच्चे नाम(साहिब)के रहस्य को जाने बिना यहाँ से चले गये। किसी को भी उस नाम की कहानी समझ में नहीं आई कि वो सच्चा नाम(साहिब) है या दूध की जगह मिलने वाला झूठा, मिलावटी नाम है। क्योंकि–**'नाम-नाम सब जगत बखाना। नाम भेद कोई बिरला जाना।।'** सत्य तक पहुँचने का रास्ता तय करने से पहले ही प्राण शरीर से निकल गये। वास्तव में यह तीन-लोक का संसार जीव रूपी मछलियों को फँसाने का एक जाल है, यहाँ लोग अज्ञान रूपी पत्थर के साथ मिलावटी झूठे नाम की नौका पर सवार होकर उसे खेव रहे हैं। सद्गुरु से मिलने वाले सच्चे नाम की नौका पर

सवार हुए बिना इस भवसागर को पार नहीं किया जा सकता। पर लोगों को इस सत्य का ज्ञान नहीं है, वे अज्ञान रूपी पत्थर के साथ झूठे नाम की नौका पर सवार होकर उसे खेवते हुए डूबे जा रहे हैं और कह रहे हैं कि नौका पार लग रही है। वास्तव में कोई पार नहीं उतर रहा।

तीन लोक में लागु ठगौरी

आंधरि गुस्टि सिस्टि भौं बौरी। तीन लोक मौं लागु ठगौरी।।
ब्रह्मा ठग्यो नाग कहं जारी। देवता सहित ठग्यो त्रिपुरारी।।
राज ठहौरी वेस्नु पर परी। चउदह भुवन केर चउधिरी।।
आदि अंत जाकि जलकल जानी। ताकी डर तुम काहे कै मानी।।
वै उतंग तुम जाति पतंगा। जम घर कियेउ जीउ को संगा।।
नीम कीट जस नीम पिआरा। विष को अम्रित कहै गँवारा।।
विष के संग कउन गुन होई। किंचित लाभ मूल गौ खोई।।
विष अम्रित गौ एकै सानी। जिन्ह जानी तिन विष कै मानी।।
काह भये नर सुद्ध बैसुद्धा। बिनु परिचै जग बूड़त बुद्धा।।
मति कै हीन कउन गुन कहई। लालच लागे आसा रहई।।

साहिब कह रहे हैं कि मन-माया की सृष्टि में सारा संसार पागल हो गया है। तीनों लोक में सब पर मन-माया का जादू लगा हुआ है, सबको इन्होंने ठग लिया है। ब्रह्मा जी, जो सृष्टिकर्त्ता हैं, उन्हें ठग लिया, शेषनाग को भी ठग लिया, देवताओं सहित शिवजी को भी ठग लिया, 14 लोकों के स्वामी विष्णु जी को भी नहीं छोड़ा, ठग लिया। हे मानव! जिस माया का आदि अंत संतों ने जल-कण के समान नाशनवान कहा है, उससे तुम भयभीत क्यों हो रहे हो!

हे जीव! तुम पतंगे के समान माया की अग्नि में पड़े हुए हो,

क्योंकि यम तुम्हारे साथ में निवास करता हुआ तुम्हें माया में उलझाया हुआ है। जैसे नीम के कीड़े को कड़वा नाम भी प्यारा लगता है, वैसे ही माया के कड़वे विष को अज्ञानी लोग अमृत समझ कर पी रहे हैं। माया रूपी विष से थोड़ी देर का सुख मिल सकता है, पर अंत में अमोलक मानव-तन बेकार चला जाता है, सच्चे आत्मानंद का अवसर खो जाता है। इस संसार के सुख रूपी अमृत में माया रूपी दुखदायी विष मिला है। जो इस रहस्य को जानते हैं, वे उसे विष ही मानते हैं। हे अज्ञानी मनुष्य! माया रूपी शरीर की शुद्धि से क्या होता है, आत्मा की शुद्धि बिना, आत्मा के परिचय बिना तो बड़े-2 विद्वान भी डूब गये। विवेकहीन मनुष्यों को माया का लालच लगा रहता है, वे माया के क्षणिक सुख में ही आशा लगाए रहते हैं।

संतो अचरज एक भौ भारी

संतो अचरज एक भौ भारी। कहौं तो को पतियाई।।
एकहि पुर्ख एक है नारी। ताकर करउ बिचारा।।
एकै अंड सकल चवरासी। भरम भुला संसारा।।
एकै नारि जाल पसारा। जग में भया अंनेसा।।
खोजत खोजत अंत ना पाया। ब्रह्मा विष्णु महेसा।।
नाग फाँस लिए घट भीतर। मुसिन सभ जग झारी।।
ग्यान खड़ग बिनु सभ जग जूझै। पकरि परत न काहू पाई।।

साहिब कह रहे हैं कि मुझे एक बहुत बड़ा अचरज हो रहा है, जिसे अगर मैं कहूँगा तो कोई विश्वास नहीं करेगा। कह रहे हैं कि इस संसार में एक ही पुरुष है और एक ही नारी है। पुरुष रूप में निरंजन ने अनेक रूप बना लिए हैं और नारी रूप में माया ने अनेक रूप बना लिए हैं। 84 लाख योनियों में एक ही निरंजन रूपी मन जीव के साथ-2 घूम

रहा है, जिससे सारा संसार भ्रमित हो गया है। एक ही नारी ने संसार में माया जाल फैला रखा है, जिसके कारण सबको संदेह हो गया है। ब्रह्मा, विष्णु और महेश तक खोजते-2 थक गये, पर निरंजन और माया के इस जाल को न समझ सके ।

यह मन रूपी निरंजन काम, क्रोध आदि के नाग फाँस को लेकर घट के भीतक बैठा हुआ है और सबके ज्ञान को इसने चुरा लिया है, किसी को भी आत्म-ज्ञान नहीं होने दे रहा, सबको अज्ञानी बना दिया है और बिना आत्मा के ज्ञान के सारा संसार इससे जूझ रहा है, पर यह किसी की पकड़ में नहीं आता।

मन स्वयं ही संसार का मूल कारण है, क्योंकि जगत मन से ही बना है और फिर नाना योनि रूपी फूलों में भी खुद ही समाया हुआ है और यह ब्रह्माण्ड रूपी फुलवारी भी उसका ही रूप है और फिर इस फुलवारी में से नाना जीवों को भी चुन-2 कर स्वयं ही खाता है। **'माली आवत देख करि, कलियाँ करी पुकार'** में भी यही भाव व्यक्त है कि एक-एक करके सब मन रूपी काल के मुँह में जा रहे हैं। वो निरंजन एक-एक करके सबको खाए जा रहा है। साहिब कह रहे हैं कि निरंजन और माया के इस जाल से वही छूट सकता है, जिसकी आत्मा को सद्‌गुरु स्वयं चेतन कर दें।

माटी के कोट पखान के ताला

माटी के कोट पखान के ताला। सोइक बन सोइ रखवाला।।
सो बन देखत जीउ डराना। ब्राह्मण वैस्नव एकै जाना।।
ज्यूँ रे किसान किसानी करई। उपजै खेत बीज नहिं परई।।
छाँडि देउ नर झेलिक झेला। बूड़े दोऊ गुरु औ चेला।।
तीसर बूड़े पारथ भाई। जिन्ह बन डाहो दावा लगाई।।
भूँकि-2 कूकुर मरि गयेऊ। काज न एक सियार से भयऊ।।

मिट्टी से बने अज्ञान रूपी संसार में अज्ञान का ही ताला लगा हुआ है। इस संसार का रखवाला भी अज्ञान ही है यानी अज्ञान से ही इस संसार का अस्तित्व है, यह टिका हुआ है। इस अज्ञान रूपी संसार को देख जीव डर गया और ब्राह्मण-वैष्णव दोनों को एक जैसा समझकर उनकी शरण में गया। यदि किसान खेती करे तो उसमें खड़ी फसल हो, पर बीज न पड़े, दाना न हो तो कैसा है! ऐसे ही इस दुखद बन से छूटने के लिए ब्राह्मणों और वैष्णवों के उपदेश अनुसार कर्मकाण्ड, मूर्तिपूजा, शुभ कर्म आदि में लग गया, पर आत्मा का साक्षात्कार नहीं हुआ, मुक्ति रूपी फल नहीं मिला। इसलिए हे मानव! इस कर्मकाण्ड के खेल को छोड़ दो, क्योंकि कर्मकाण्ड के इस खेल को युगों-2 से खेलने वाले गुरु-शिष्य दोनों डूब गये। फिर तीसरे वे कथावाचक भी डूब गये, जिन्होंने अपने उपदेशों द्वारा एक धर्म को दूसरे धर्म से लड़ाकर इस संसार रूपी बन में दावाग्नि लगा दी। रँगे सियार की तरह गुरु बनकर बैठे हुए कथावाचक कुत्ते की भांति भौंक-2 कर मर गये, पर एक भी जीव का कल्याण उनसे नहीं हुआ।

महादेव मुनि अंत न पाया

महादेव मुनि अंत न पाया। उमा सहित उन जनम गमाया।।
उनहूँ ते सिध साधक होई। मन निहचल कहु कैसे होई।।
जब लग मन का आहै सोई। तब लग चेति न देखै कोई।।
तब चेतिहो जब तजिहो प्राना। भया अयान तब मन पछताना।।
इतना सुनत निकट चलि आई। मन विकार छूटे नहीं भाई।।

साहिब कह रहे हैं कि महादेव जी ने भी मन रूपी निरंजन की सीमा का अंत नहीं पाया और पार्वती जी सहित जन्म गँवा दिया। कह रहे हैं कि फिर उनके समान यदि कोई सिद्ध साधक हो जाए तो सोचो, मन

को कैसे नियंत्रित कर सकता है ! जब तक शरीर में आत्मा है, तब तक तो कोई जागता नहीं, पर जब प्राण छूट गये तो फिर चेतने से क्या लाभ! तब तो मन में पछतावा ही शेष रह जाता है। इन उपदेशों को सुनते-2 भी कोई समझता नहीं, इतने में मृत्यु निकट आ जाती है और तब भी मन के विकार नहीं छूटते।

जो काल फाँस ते बाचा होई

संत महं तो सुमिरो सोई। जो काल फाँस तो बाचा होई।।
दत्तात्रेय मरम नहिं जाना। मिथ्या साधि भुलाना।।
सलिल मथि घृत कै काढ़ि न। ताहि समाधि समाना।।
गोरख पौन राखि नहिं जाना। जोग जुग्ति अनुमाना।।
रिद्धि सिद्धि संयम बहु तेरा। पारब्रह्म नहिं जाना।।
वसिस्ट स्रिस्ट विद्या संपूरन। राम ऐसो सिस साखा।।
जाहि राम को करता कहियो। तिनहुँ को काल न राखा।।
हिन्दू कहैं हमहिं ले जारों। तुरक कहैं हमारो पीर।।
दोऊ आय दीन में झगरैं। ठाढ़े देखैं हंस कबीर।।

साहिब कह रहे हैं कि उस संत की भक्ति करो, जो काल फाँस से बचा हुआ है। दत्तात्रेय जैसों ने सत्य का भेद नहीं पाया और बेकार की ही साधनाओं में भूले रहे, पानी को मथ सार रूपी घी को निकालना चाहा। गोरख जी ने योग आदि के द्वारा प्राणों को वश में कर लिया, अनेक रिद्धियाँ-सिद्धियाँ भी प्राप्त कर लीं, पर सत्य को नहीं जान सके । वशिष्ठ जी विद्या में सम्पूर्ण थे, राम जी जैसे उनके शिष्य थे। जिन दशरथ पुत्र राम को सभी ने परमात्मा करके माना, उन्हें भी काल ने नहीं छोड़ा।

हिंदू लोग कहते हैं कि हम मृतक को जलायेंगे और मुसलमान कहते हैं कि हम अपने पीरों के कहे अनुसार मृतक को ज़मीन में गाड़ेंगे। इस तरह दोनों झगड़ते हैं और पास में खड़ी आत्मा, जिसका शरीर से कोई लेना-देना नहीं है, इस झगड़े को देखकर सोचती है कि ये मूर्ख क्या जड़ शरीर की अंतिम क्रिया के लिए लड़ रहे हैं।

काल निरंजन अथवा निराकार

चकिया सब रागन की रानी॥

एक पाट धरती चले, एक चले असमानी।

काल निरंजन पीसन लागे सवालाख की घानी॥

बड़े २ इस जगमें पिस गये, पिसे गये योगी जिंदा।

छप्पन कोटि यादवा पिस गये, परे काल के फंदा॥

नौ भी पिस गये दस भी पिस गये, पिस गये सहस अठासी।

कथनी कथ कथ पिस गये भक्ता भये, गर्भ के वासी॥

नौऊनाथ चौरासी पिस गये, बृह्मा सुत अट्ठासी।

मौनी औ सन्यासी पिस गये, परे काल की फांसी॥

जंगम और सेबड़ा पिस गये, रावण कंसा।

कहें कबीर सुनो भाई साधो, बचे विवेकी संता॥ 32॥

अलख निरंजन लखे न कोई

अलख निरंजन लखे न कोई। जेहि बंधे बंधा सभ लेई।।
जेहि झूठे सभ बंधु अयाना। झूठी बात साँच कै माना।।
धंधा बंधा कीन्ह बेवहारा। करम वेवर्जित बसे निनारा।।
खट आस्रम छौ दरसन कीन्हा। षटरस बास खटै वस्तु चीन्हा।।
चारि वृच्छ छउ साख बखानी। विद्या अगिनत गनै न जानी।।
अउरो आगम करै विचारा। ते नहिं सूझै वार न पारा।।
जप तीरथ व्रत कीजै पूजा। दान पुन्नि कीज बहु दूजा।।

जिसने सबको जन्म-मरन में बाँध रखा है, उस निरंजन को कोई नहीं देख पा रहा है और उसकी झूठी माया को सच मानकर सभी बँध गये हैं। उसी की इच्छानुसार सब कर्म किये जा रहे हैं, सब संसार के झूठे धंधे में फँस गये हैं। कहीं छः आश्रम बना डाले तो कहीं छः दर्शन बना दिये, पर निरंजन का पार किसी ने नहीं पाया, कोई भी उसके बंधन से आज़ाद नहीं हो पाया।

हौं देखा परले की छाहीं

बिनसे नाग गरुड़ गलि जाई। बिनसे कपटी अउ सत भाई।।
बिनसे पाप पुन्नि जिन्ह कीन्हा। बिनसे गुन निरगुन जिन्ह चीन्हा।।
बिनसे अगिन पौन अउ पानी। बिनसे सिस्टि कहाँ लउ गनी।।
विस्नु लोक बिनसे छिन माहिं। हौं देखा परलै की छाहीं।।

साहिब कह रहे हैं कि शेषनाग और गरुड़ भी नष्ट हो गये, कपट करने वाला शकुनि और सौ कौरव भाई भी नष्ट हो गये, पाप-पुण्य करने वाले भी नहीं रहे, सगुण-निर्गुण को जानने वाले भी नहीं रहे।

कितना कहें, अग्नि, पवन और पानी भी नष्ट हो जाते हैं। कहाँ तक गिनाया जाए, सृष्टि भी नष्ट हो जाती है। विष्णु लोक भी छिन मात्र में नष्ट हो जाता है। साहिब कह रहे हैं कि प्रलय में मैंने सबको नष्ट होते देखा है।

पढ़ि-पढ़ि पण्डित कर चतुराइ

पढ़ि पढ़ि पण्डित कर चतुराई। निज मुकति मोहिं कहु समुझाई।।
कहँ बसै पुर्ख कवन सो गाऊँ। पण्डित मोहिं सुनावहु नाऊँ ।।
चारि वेद ब्रह्मे निज ठाना। मुकुति का मरम उनहुँ नहिं जाना।।
दान पुन्नि उन बहुत बखाना। अपने मरन की ख़बर न जाना।।
एक नाम है अगम गंभीरा। तहवाँ अस्थिर दास कबीरा।।

साहिब कह रहे हैं कि हे पण्डितो! तुम पोथियाँ पढ़-2 कर चतुराई दिखा रहे हो, पर ज़रा अपनी मुक्ति के बारे में मुझे समझाकर कहो। वो परमात्मा किस गाँव में रहता है, ज़रा उस देश का, उस गाँव का नाम तो बताओ। ब्रह्मा जी ने चार वेदों की रचना की, पर मुक्ति का भेद न समझ सके। वेद में उन्होंने दान-पुण्य आदि का बड़ा बखान किया, पर अपने मरने की ख़बर उन्हें मालूम नहीं हुई अर्थात काल से वे भी नहीं बच सके, मुक्ति वे भी न पा सके। साहिब कह रहे हैं कि मुक्ति का दाता एक अगम, गंभीर नाम है, जहाँ मैं स्थिर हूँ।

नाम गुण न्यारो न्यारो न्यारो

नाम गुण न्यारो न्यारो न्यारो।
अबुझा लोग कहाँ लौं बूझैं, बूझनहार विचारो।।
केते रामचन्द्र तपसी सों, जिन यह जग बिटमाया।

केते कान्ह भये मुरलीधर, तिन भी अंत न पाया।।
मत्स्य कच्छ बाराह स्वरूपी, वामन नाम धराया।
केते बौद्ध भये निकलंकी, तिन भी अंत न पाया।।
केतेक सिद्ध साधक सन्यासी, जिन बनवास बसाया।
केते मुनि जन गोरख कहिए, तिन भी अंत न पाया।।
जाकी गति ब्रह्मा नहिं पाई, शिव सनकादिक हारे।
ताके गुन नर कैसेक पैहो, कहैं कबीर पुकारे।।

उस सच्चे नाम(साहिब) के गुण तीन लोक से न्यारे हैं। गुण तीन प्रकार के हैं। सतगुण–विष्णु जी, रजोगुण–ब्रह्मा जी और तमोगुण–शिव जी। साहिब खोजियों से कह रहे हैं कि जो विचारहीन, विवेकहीन, मूर्ख मनुष्य हैं, वे इस बात को नहीं समझेंगे, इसलिए आप इस बात पर विचार करो। यानी तीन लोक के स्वामी विष्णु जी कहे जाते हैं, पर वो नाम (साहिब)तो इनसे परे है। आगे कह रहे हैं कि रामचंद्र जैसे न जाने कितने तपस्वी हो गये, ना जाने कितने कृष्ण भी हो गये, पर कोई भी उस नाम का भेद न पा सका। फिर कितने ही मत्सय अवतार हो गये, कितने भी कच्छप अवतार भी हो गये, कितने भी वामन अवतार भी हो गये, कितने ही बुद्ध और निष्कलंकी ही आए, पर इनमें से कोई भी उस नाम को न जान सका। इस तरह कितने सिद्ध, साधक और सन्यासियों ने जंगलों में उस साहिब की खोज की, कितने ही गोरख जैसे भी आए, पर कोई भी उस नाम को न जाना। कह रहे हैं कि ब्रह्मा जी, शिवजी, सनकादि भी जिस नाम(साहिब) को न जान सके, उस साहिब को साधारण मनुष्य अपनी ताक़त से कैसे जान सकते हैं!

संतो आवै जाय सो माया

संतो आवै जाय सो माया।

है प्रतिपाल काल नहिं वाके, ना कहुँ गया ना आया।।
का मकसूद मच्छ कछ होई, संखासुर न संघारा।
है दयाल द्रोह नहिं वाके, कहहु कवन को मारा।।
वै करता नहिं वराह कहाये, धरनि धरो नहिं भारा।
ई सभ काम साहब के नाहीं, झूठ कहै संसारा।।
खंभ खोरि जो बाहर होई, ताहि पतिजे सभ कोई।
हरनाकुस नख ओद्र विदारा, सो करता नहिं होई।।
बावन रूप बलि को जांचे, जो जांचे सो माया।
बिना विवेक सकल जग भरमे, माये जग भरमाया।।
परसुराम छत्री नहिं मारे, ई छल माया कीन्हा।
सतगुरु भेद भगति नहिं जाने, जीवहिं मिथ्या दीन्हा।।
सिरजनहार न व्याही सीता, जल पखान नहिं बंधा।
वे रघुनाथ एक कै सुमिरै, जो सुमिरै सो अंधा।।
गोपी ग्वाल न गोकुल आया, करते कंस न मारा।
है मेहरबान सभहिन को साहिब, नहिं जीता नहिं हारा।।
वै करता नहिं बौध कहाये, नहीं असुर संहारा।
ग्यनहीन करता के भरमे, माये जग भरमाया।।
वै करता नहिं भया कलंकी, नहिं कलिग्रहिं मारा।
ई छल बल सब माया कीन्हा, जत्त सभ टारा।।
दस अवतार ईसवरी माया, करता कै जिन पूजा।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, उपजै खपै सो दूजा।।

जो जन्म लेता है और फिर मर जाता है, वो माया है; जो रक्षा करने वाला सच्चा साहिब है, उसकी मृत्यु नहीं होती है; वो इस संसार

के आवागमन में नहीं आता। दुनिया ने अवतार को अपना सच्चा साहिब (परम-पुरुष) मान लिया। साहिब कह रहे हैं कि मत्स्य, कच्छप आदि अवतार धारण करने का मकसद ही क्या था! यानी सब उसके ही बच्चे थे तो कुछ के लिए रक्षक तो कुछ के लिए भक्षक क्यों बना, इसलिए कह रहे हैं कि उस साहिब ने संखासुर दैत्य को नहीं मारा, क्योंकि वो साहिब तो दयाल है, किसी से उनकी दुश्मनी नहीं है, सब आत्माएँ उसी की अंश हैं, फिर किसे मारेंगे, फिर किसे कष्ट देंगे! यह मारना-काटना अच्छी बात नहीं है, क्रूरता है, हिंसात्मक कार्य है, इसलिए यह काम साहिब का नहीं है। वो साहिब वराह बनकर भी नहीं आया और न ही उसने धरती का बोझ ही उठाया। ये सब काम साहिब के नहीं हैं, पर दुनिया झूठे ही इसे साहिब के काम कहती है। फिर जो नरसिंह रूप में खंभा फोड़कर बाहर आए, सबने उसी को सच्चा साहिब मान लिया, पर हिरण्यकश्यप के पेट को नाखून से फाड़ने वाला भी साहिब नहीं था। फिर बावन रूप बनाकर जिसने राजा बलि से तीन पग धरती माँगी, वो भी साहिब नहीं था। वो साहिब किसी से कुछ नहीं माँगता। वो तो दाता है, माँगने वाला नहीं। इसलिए इन बातों पर विचार किये बिना सारा संसार भ्रमित हो गया, इन्हीं अवतारों को अपना सच्चा साहिब समझने लग गया। इस तरह उस निरंजन की माया ने सारे संसार को भ्रमित कर दिया। फिर वो परशुराम बनकर भी नहीं आया, क्षत्रियों को नहीं मारा। यह छल माया ने ही किया। सद्गुरु की भक्ति के रहस्य को जाने बिना लोगों ने अपना जीवन व्यर्थ कर दिया। आगे कह रहे हैं कि उस साहिब ने सीता से ब्याह नहीं किया। पिता पुत्री से विवाह कर ही कैसे सकता है! ना ही उसने समुद्र को पत्थरों से बाँधा। इसलिए वो मूर्ख है जो बिना इन बातों पर विचार किये भक्ति करता है। फिर वो साहिब गोपियों-ग्वालों को संग खेलने गोकुल में नहीं आया और न ही भक्षक वाले काम करके कंस को मारा। वो साहिब तो सब पर मेहरबान है, न किसी से जीतता है, न हारता है। वो साहिब बुद्ध बनकर भी नहीं आए, उन्होंने

राक्षसों को भी नहीं मारा। सच्चे साहिब के ज्ञान बिना मनुष्य भ्रमित हो गया। माया ने सबको भ्रमित कर दिया। फिर वो कलकी अवतार लेकर भी नहीं आया, कलिंग के लोगों को नहीं मारा। यह सब छल तो माया ने ही किया, योगियों, यतियों, सत्यवादियों, सबको टरका दिया। जैसे बच्चा हवाई जहाज़ लेना चाहता है, जिद्द करता है तो उसे झूठे, नक़ली खिलौने वाले जहाज़ से टरका दिया जाता है, ऐसे ही माया ने बड़े-बड़ों को झूठ से टरका दिया। दस अवतार जो हुए, वो सब निरंजन की माया थी(निरंजन को ही ईश्वर कहा जाता है, परमात्मा कहा जाता है), जिसे सारा संसार साहिब समझकर, परम सत्ता समझकर पूजता है। साहिब कह रहे हैं, हे लोगो! मेरी बात सुनो और उस पर विचार करो, जो इस संसार में माया का शरीर लेकर जन्म लेता है और मर जाता है, वो साहिब नहीं है, कोई और(निरंजन) है।

संतो देखो जग बौराना

संतो देखत बउराना।
साँच कहौ तो मारन धावै, झूठे जग पतिआना।।
नेमी देखा धरमी देखा, प्रात करे असनाना।
आतम मारि पखानहिं, उनमें किछउ न ग्याना।।
बहुतक देखा पीर औलिया, पढ़ै कितेब कुराना।
कै मुरीद ततरीब बतावै, उनमें उहै जु ग्याना।।
आसन मार डिंभ धरि बैठे, मन में बहुत गुमाना।
पीतर पाथर पूजन लागे, तीरथ गरब भुलाना।।
माला पहिरे टोपी पहिरे, छाप तिलक अनुमाना।
साखी सबदै गावत भूले, आतम खबरि न जाना।।

हिंदू कहैं मोहिं राम पियारा, तुरक कहैं रहिमाना।
आपुस में दोउ लरि लरि मूये, मरम न काहू जाना।।
घर घर मंतर देतु फिरत हैं, महिमा के अभिमाना।
गुरु सहित सिख सभ बूड़े, अंत काल पछिताना।।
कहैं कबीर सुनो भाई साधो, ई सभ भरम भुलाना।
केतिक कहौं कहा नहिं मानै, सहजै सहज समाना।।

साहिब कह रहे हैं–हे संतो! मैं देख रहा हूँ कि यह सारा संसार पागल हो गया है। सत्य की बात जिससे कहो, वो मारने दौड़ता है और झूठी बात पर ही सभी विश्वास करते हैं। मैंने नियमानुसार नित्य पूजा-कर्म करने वाले को देखा, धर्मात्माओं को देखा, पर वे भी सजीव प्राणियों को मारकर पत्थर की पूजा करते हैं, इसलिए उनमें कुछ भी ज्ञान नहीं है। यानी कुछ तो बकरे मुर्गे आदि जीवों के मारकर देवी-देवताओं पर चढ़ाते हैं और कुछ सजीव पत्तियों को तोड़कर पत्थर की पूजा करते हैं। फिर बहुत से पीरों-फकीरों को भी देखा, जो कितेब-कुरान आदि पढ़-पढ़कर अपने शिष्यों को खुदा के घर जाने का उपाय बताते हैं, पर उनमें भी वही ज्ञान है अर्थात वे भी हिंसक ही हैं, जीवों को मारते हैं। फिर कुछ आसन मारकर बड़े घमण्ड से बैठते हैं, पीतल के पत्थर की पूजा करते हैं और तीर्थादि के गर्व में भूले हुए हैं। कुछ सिर पर माला-टोपी आदि पहनकर माथे पर तिलक, शरीर पर विभिन्न छापे लगाए फिरते हैं। ये केवल साखियों और शब्दों को गाते हैं, पर इन्होंने वास्तव में आत्मा का ज्ञान नहीं पाया है। हिंदू तो राम की भक्ति में लगे हैं, और मुसलमानों का प्यारा रहीम है। दोनों आपस में लड़ मरे हैं, पर सत्य के भेद को कोई जान नहीं पाया। कुछ विद्या के, पाण्डित्य के अभिमान में घर-2 जाकर मंत्र देते फिरते हैं। ऐसे शास्त्री गुरुओं सहित सभी शिष्य भी अंत में भवसागर में डूब गये। साहिब कह रहे हैं–हे लोगो! सुनो और मेरी बात पर विचार करो, ये सब भ्रम में भूले हुए हैं, मैंने बहुत कहा, पर ये हैं कि मानते ही नहीं; मैं सहज भक्ति-मार्ग की बात करता

हूँ, पर इन्हें काल की भक्ति ही अच्छी लगती है।

अवधू छाड़हू मन बिस्तारा

अवधू छाड़हू मन बिस्तारा।
सो पद गहो जाहि तो सद्गति, पारब्रह्म सो न्यारा।।
नहीं महादेव नहीं मुहम्मद, हरि हजरत किछू नाहीं।
आदम ब्रह्म किछुवो नहिं होते, नहीं धूप नहिं छाहीं।।
असी आसै पैगंबर नहिं होते, सहस अठासी मूनी।
चंद सूरज तारागन नाहीं, मच्छ कच्छ नहिं दूनी।।
वेद कितेब सुम्रित नहिं संजम, नहिं जीवन परछाहीं।
बंग निमाज कलिमा नहिं होते, रामहुँ नाहिं खोदाई।।
आदि अंत मन मध्य न होते, आतस पवन न पानी।
लख चौरासी जीउ जन्तु नहिं, साखी सब्द न बानी।।
कहैं कबीर सुनो हो अवधु, आगे करहु बिचारा।
पूरन ब्रह्म कहाँ ते परगटे, किरतम किन उपराजा।।

साहिब कह रहे हैं–हे सन्यासी! मन की सीमा को छोड़ो और पारब्रह्म से परे उस साहिब की भक्ति करो, जिससे महानिर्वाण पद की प्राप्ति हो सके। वहाँ ना महादेव है, ना मुहम्मद है, ना विष्णु जी हैं, ना हज़रत। मनुष्य, ईश्वर, दिन-रात आदि कुछ भी वहाँ नहीं है और न ही मत्स्य, कच्छ आदि अवतार हैं। वेद, कितेब, स्मृति, संयम, जीवन आदि की छाया भी नहीं है। बाँग देने की ज़रूरत नहीं किसी को वहाँ, नमाज़ पढ़ने की ज़रूरत नहीं है और न ही कलमा करने की आवश्यकता है। वहाँ ना राम है और न खुदा। वहाँ आदि, अंत, मन आदि भी नहीं हैं और अग्नि, पवन, पानी आदि तत्व भी नहीं। चौरासी लाख योनियों के जीव

भी वहाँ नहीं हैं और साखी, शब्द, वाणियाँ भी नहीं हैं। साहिब कह रहे हैं–हे सन्यासी! मन की सीमा के आगे विचार करो और पूर्ण ब्रह्म निरंजन कहाँ से प्रगट हुआ और झूठी सृष्टि की, बनावटी सृष्टि का विस्तार किसने किया, इस पर विचार करो। कहने का भाव है कि साहिब ने ही तीन लोक के स्वामी निरंजन की उत्पत्ति की और इसने बुरा बेटा बनकर झूठी सृष्टि की रचना कर डाली।

सत्त शब्द से बाँचिहौ

सत्त शब्द से बाँचिहौ, मानहु इतवारा हो।
अछय मूल सतपुरुष है , निरंजन डारा हो।।
तिरदेव साखा भये, पत्ती संसारा हो।
ब्रह्मा वेद सही किये, सिउ योग पसारा हो।।
वेस्नु माया उत्पति कियो, ई उरले वेवहारा हो।
तीन लोक दसहूँ दिसा, यम रोकिन द्वारा हो।।
कीर भये सब जियरा, लिए विख का चारा हो।
जोत स्वरूपी हाकिमा, जिन अमल पसारा हो।।
कर्म की बंसी लाय के, पकरो जग सारा हो।
अमल मिटावों तासु की, पठवो भौं पारा हो।।
कहैं कबीर निर्भय करो, परखो टकसारा हो।।

साहिब कह रहे हैं–हे जीव! तुम सत्य शब्द (नाम) से ही बच सकते हो। मेरी इस बात पर विश्वास करो। मूल पेड़ अविनाशी परमात्मा चौथे लोक का स्वामी सत्य पुरुष है, फिर तीन लोक का स्वामी निरंजन आगे उसकी एक शाखा समान है और उस शाखा की पुनः आगे ब्रह्मा, विष्णु और महेश के रूप में तीन टहनियाँ हैं और फिर संसार उस वृक्ष पर

लगने वाले अनेकों पत्तों के समान है।

त्रिदेव में ब्रह्मा जी ने वेद बनाए, शिवजी ने योग का विस्तार किया और विष्णु जी ने माया फैलायी। इसलिए वेद पाठ, योग आदि सब सांसारिक व्यवहार है। तीन लोक और दसों दिशाओं में निरंजन ने जीवों का अपने मूल स्थान तक जाने का द्वार रोक दिया। तोते की भांति जीव निरंजन रूपी शिकारी के जाल में अपने ही अज्ञान से पकड़ा गया और माया रूपी विष को खाने लग गया। ज्योति स्वरूप मन ने तीन लोक में अपना प्रभााव फैलाया हुआ है और मछुआरा बनकर कर्म रूपी काँटे से सबको पकड़ा हुआ है। साहिब कह रहे हैं कि तुम निर्भय होकर सार शब्द को परखो, क्योंकि वही मन के इस प्रभाव को मिटाकर तुम्हें भवसागर के पार पहुँचा सकता है।

आपन करम न मेटो जाई

आपन करम न मेटो जाई।
करमक लिखल मिटै धौं कैसे, जो युग कोटि सिराई।।
गुरु बसिष्ठ मिलि लगन सोधायो, सूर्ज मंत्र एक दीन्हा।
जो सीता रघुनाथ बियाही, पल एक संचु न कीन्हा।।
तीनि लोक के करता कहिये, बालि बधो बटिआई।
एक समै ऐसी बनि आई, उनहुँ औसर पाई।।
नारद मुनि को बदन छिपायो, कीन्हों कपि को सरूपा।
सिसुपाल की भुजा उपारिन, आप भयो हरि ठूँठा।।
पारबती को बाँझ न कहिये, ईस्वर न कहिये भिखारी।
कहैं कबीर करता की बातें, करम की बात निनारी।।

साहिब कह रहे हैं कि कर्म का फल भोगना ही पड़ता है। चाहे करोड़ों युग क्यों न बीत जाएँ, कर्मों का लेखा मिटता नहीं है। देखो, राम

जी के गुरु वशिष्ठ जी ने सीता-राम के विवाह की लग्न तैयार की और सूर्य ने सीता को एक मंत्र भी दिया, पर जिस सीता का राम जी से विवाह हुआ, वो कभी सुखी नहीं रही। तीन लोक के कर्त्ता कहे जाने वाले राम जी ने बालि को छल से छिपकर जबरन मारा, पर एक समय ऐसा भी आया जब बालि को कृष्णावतार में व्याध बनकर उनसे बदला लेने का अवसर मिला। फिर विष्णु जी ने नारद का मुख छिपाकर बंदर-सा बना दिया और कृष्णावतार में शिशुपाल की भुजा उखाड़ दी, पर स्वयं भी उन्हें इन कर्मों का फल भोगना ही पड़ा। साहिब कह रहे हैं कि पार्वती को बाँझ मत कहो और शिवजी को भिखारी मत कहो, क्योंकि ये तो कर्त्ता और कर्म की बातें हैं, जो बड़ी ही निराली हैं।

भरम हिंडोला झूले सभ जग आय

भरम हिंडोला झूले सभ जग आय।
पाप पुन्नि के खम्भा दोऊ, मेरु माया माहिं ।।
लोभ भौंरा बिखै मरुवा, काम कीला ठानि।
सुभ असुभ बनाये डांड़ी, गहे दूनो पानि।।
करम पटरिया बैठि के, को-को न झूलै आनि।
झूलत गन गंधर्व मुनिवर, झूलत सुरपति इन्द्र।।
झूलत नारद सारदा, झूलत बेयास फनिन्द्र।
झूलत निरगुन सरगुन होय, झूनिया गोविंद।।
छौ चारि चउदह सात एकइस, तीनिउ लोक बनाय।
खानि बानि खोजि देखहु, अस्थिर कोई न रहाय।।
खण्ड ब्रह्मण्ड खोजि देखहु, छूटत कितहुँ नाहिं ।
साधु संघति खोजि देखहु, जिउ निस्तरि कित जाहिं ।।

ससि सूर रैनि सारदी, तहाँ संत विरले जाहिं ।
काल अकाल परलै नहीं, तहाँ संत विरले जाहिं ।।
तहाँ के बिछुरे बहु कलप बीते, भूमि परे भुलाय।
साधु संगति खोजि देखहु, बहुरि न उलटि समाय।।
ये झूलवे की भै नहीं, जउ होत संत सुजान।
कहैं कबीर सत सुक्रित मिलै तो, बहुरि न झूलै आनि।।

माया रूपी भ्रम झूले में सारा संसार झूल रहा है। इस झूले में पाप और पुण्य के दो खंभे हैं और इन खंभों के बीच में माया की लकड़ी(बल्ली) लगी है। फिर लोभ रूपी कीलें उसमें ठोंकी गयी हैं। शुभ-अशुभ कर्मों की दो डाँडी लगी हुई हैं, जिसे जीव ने दोनों हाथों से पकड़ा रखा है। साहिब कह रहे हैं कि कर्म की इस पटरी पर आकर कौन-2 नहीं झूला अर्थात सभी इस पर झूले। कौन-2 झूला! आगे कह रहे हैं कि गण, गंधर्व, मुनि आदि सब झूले। देवताओं के राजा इन्द्र तक झूले। मुनि श्रेष्ठ नारद जी और शारदा जी भी झूलीं। वेद व्यास जी और शेषनाग जी भी झूले। इतना ही नहीं, ब्रह्मा जी, शंकर जी, शुकदेव जी भी झूले। सूर्य और चंद्रमा भी झूले। निर्गुण, निराकार परमात्मा भी सगुण रूप में अवतार धारण कर यह झूला झूला।

साहिब कह रहे हैं कि चार वेद, छः शास्त्र, 14 विद्याएँ, साद द्वीप, 21 भुवन और तीन लोक आदि जीवों को भ्रमित करने के लिए बनाए गये। चाहे खोजकर देख लो, कोई भी स्थिर नहीं है; सब ही भ्रम का यह झूला झूल रहे हैं। नौ खण्ड और चाहे पूरे ब्रह्माण्ड को खोज कर देख लो, कोई भी इस भ्रम रूपी झूले से छूटा नहीं है, इसलिए साधु की संगत में आकर खोजने का प्रयास करो कि यह जीव मुक्त होकर कहाँ जाता है।

माया के विशाल भ्रम रूपी झूले से परे साहिब के देश में चंद्रमा, सूर्य, रात, विद्या आदि नहीं हैं। वहाँ पाँच तत्व का विस्तार भी नहीं है, वहाँ काल-अकाल भी नहीं है, वहाँ कोई बिरले संत ही पहुँचते हैं। वहीं से बिछुड़ कर जीव इस तीन लोक में आकर माया के भ्रम रूपी झूले में झूल रहे हैं और ऐसे में बहुत समय बीत गया है। साहिब समझा रहे हैं कि संतों की संगत में जाकर उस देश को, उस साहिब को खोजो, जिसमें पुनः वापिस इस माया के झूले में न झूलना पड़े।

झूठेहिं जनि पतियाहु हो

झूठेहिं जनि पतियाहु हो, सुनु संत सुजाना।
तेरे घटहीं में ठगपूर है, मति खोवहु अपाना।।
झूठे की मंडान है, धरती असमाना।
दसहुँ दिसा वाकि फंद है, जिव घेरे आना।।
नौधा बेद कितेब है, झूठे का बाना।
काहू के वचनहिं फुरे, काहू करामाती।।
मान बड़ाई ले रहे हैं, हिंदू तुरक निअरानी।
बहुत खुदी दिल राखते, बूड़े बिनु पानी।।
कहैं कबीर कासो कहौं, सकलो जग अंधा।
सांचे से भागा फिरै, झूठ का बंदा।।

साहिब कह रहे हैं कि हे संतो! झूठ में विश्वास मत करो। तुम्हारे शरीर में मन रूपी ठग बैठा हुआ है, पर तुम अपने आत्म ज्ञान को मत खोना। धरती और आकाश में जो भी है, सब झूठ का ही विस्तार है। दसों दिशाओं में उसी मन रूपी ठग का फंदा है, जिसके घेरे में जीव आ गया है। योग, जप, तप, संयम, तीर्थ, व्रत, दान, नवधा भक्ति, वेद, कितेब आदि सब झूठ का ही रूप है, अर्थात इन चीज़ों से जीव का कल्याण कभी नहीं होनो वाला। किसी को अनहद धुनों का अनुभव हुआ तो वो अपने को बड़ा मानने लगा, किसी को सिद्धियाँ मिली तो वो भी अहंकार में आ गया। हिंदू-मुसलमान दोनों मान-बढ़ाई पाने में ही

सुर नर मुनि सबको ठगै, मनहिं लिया औतार।
जो कोई याते बचै, तीन लोक से न्यार॥

मरने वाले का पता

अंतकाल जब जीव का आवै। यथा कर्म तब देही पावै॥
हेठ द्वार जब जीव निकाशा। नरक खानि में पावै वासा॥
नाभिद्वार[1] से जीव जब जाई। चलचर योनि में प्रकटाई॥
मुख द्वार से जीव पयाना। अन्न खानि में तासु ठिकाना॥
सुआंस द्वार से जीव जब जाई। अंडज़ खानि में प्रकटाई॥
नेत्र द्वार जीव जब जाता। मक्खी आदि तन को पाता॥
श्रवन द्वार ते जीव जब चाला। प्रेत देह पाय ततकाला॥
दशम द्वार से जीव जब जाई। स्वर्ग लोक में वासा पाई॥
राजा होय के जग में आई। भोगे भोग बहु विधि भाई॥
11वे द्वार से जीव जब जाता। परम पुरुष के लोक समाता॥
बहुरि न इस भवसागर आता। फिर-फिर नाहिं गर्भहि समाता॥

जब जीव का अंतिम समय आता है तो अपने कर्मानुसार ही वो दूसरा शरीर धारण करता है। मरने के उपरान्त कौन-सा जीव किस योनि में चला जाता है, इसकी पहचान बताते हुए साहिब जी कह रहे हैं कि यदि मरते समय मल-द्वार से प्राण निकल जाएँ तो वो जीव नरक में चला जाता है, क्योंकि वो है ही नरक का द्वार। उसकी पहचान है कि तब मृतक का मल बाहर आ गया होगा. फिर जिसके प्राण मरते समय मूत्र-द्वार से निकल जाते हैं, वो जलचर योनि में जन्म लेता है। उसकी पहचान है कि तब मूत्र बाहर आ जाएगा। फिर जिसके मरते समय मुख से प्राण निकल जाएँ, वो अन्न खानि में जन्म लेता है; अन्न खानि का जीव कीड़ा बनता है। उसकी पहचान है कि मुख बहुत ऊंचा खुला हुआ-सा होगा मौत के समय; खुला रह जाएगा। इसी तरह जिसके प्राण मौत के समय नासिका द्वारा से चले गये, वो अण्डज खानि में जन्म लेगा; पक्षी आदि

बनेगा। फिर जिसके प्राण आँखों के द्वारा से चले गये वो मक्खी आदि के शरीर में जाता है। उसकी आँखें मौत के समय खुली रह जायेंगी। इस तरह जिसके प्राण कान के द्वार से चले गये, वो उसी समय प्रेत-योनि में चला जाएगा। ऐसे मृतक के शरीर को देखकर ही डर लगेगा। फिर इसके प्राण अंतिम समय में दसवें द्वार से निकल जाएँ, वो स्वर्ग में चला जाता है और पुनः मृत्यु-लोक में आकर राजा बनता है। उस समय मृतक प्रसन्नचित मुद्रा में दिखाई देगा। फिर जिसके प्राण अन्तिम समय में 11वें द्वार से चले गये, वो इस भवसागर से सदा-सदा के लिए छूटकर वापिस परम-पुरुष के घर अमर-लोक में चला जाएगा।

दसवें द्वार ते न्यारा द्वारा। ताका भेद कहूँ मैं सारा॥

नौ द्वारे संसार सब, दसवें योगी साधु।
एकादश खिड़की बनी, जानत संत सुजान॥ -साहिब कबीर

.... आठ अटाकी अटारी मज़ारा, देखा पुरुष न्यारा॥
न निराकार आकार न ज्योति, नहिं वहाँ वेद विचारा॥
ओंकार कर्त्ता नहीं कोई, नहीं वहाँ काल पसारा॥
वह साहिब सब संत पुकारा, और पाखंड है सारा॥
सद्गुरु चीन्ह दीन्ह यह मारग, नानक नज़र निहारा॥
-गुरू नानक देव जी

पलटू कहै साँच कै मानौ। और बात झूठ कै जानौ॥
जहवाँ धरती नाहिं अकासा। चाँद सूरज नाहिं परगसा॥
जहवाँ ब्रह्मा विष्णु न जाहीं। दस अवतार न तहाँ समाहीं॥
आदि जोति ना बसै निरंजन। जहवाँ शून्य शब्द नहिं गंजन॥
निरंकार ना उहाँ अकारा अक्षर शब्द नाहीं विस्तारा॥
जहवाँ जोगी जाए न पावै। महादेव ना तारी लावै॥
जहवाँ हद अनहद नहिं जावै। बेहद वहाँ रहनी पा पावै॥
जहवाँ नाहिं अगिनि परगासा। पाँच तत्त ना चलता स्वाँसा॥
-पलटू साहिब

पुस्तक सूची

हिन्दी में

1. परा रहस्या
2. मासिक पत्रिका सत्यकेतु
3. पावन प्रार्थनाए
4. सद्गुरु चालीसा
5. वार्षिक डायरी
6. सद्गुरु भक्ति
7. कहाँ से तू आया और कहाँ तूझे जाना रे ?
8. सत्संग सुधा रस
9. नाम अमृत सागर
10. अमृत वाणी
11. सद्गुरु नाम जहाज़ हैं
12. चल हंसा सतलोक
13. कोटि नाम संसार में तिनते मुक्ति न होय।
14. मूल नाम गुप्त है, जाने बिरला कोय॥
15. गुरु सुमिरै सो पार

16. तीन लोक से न्यारा
17. सेहत के लिए ज़रूरी
18. सहजे सहज पाइये
19. रोगों से छुटकारा
20. सद्गुरु महिमा
21. भक्ति के चोर
22. अनुरागसागर वाणी
23. Origin of Soul

आरती

जय सद्‌गुरु देवा, स्वामी जय सद्‌गुरु देवा,
सब कुछ तुम पर अर्पण करहूँ पद सेवा।

जय गुरुदेव दया निधि, दीनन हितकारी, स्वामी भक्तन हितकारी,
जय जय मोह विनाशक, जय जय तिमिर विनाशक, भय भंजन हारी।स्वामी जय...
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव, गुरु मूरति धारी, स्वामी प्रभु मूरति धारी,
वेद पुराण बखानत, शास्त्र पुराण बखानत, गुरु महिमा भारी।स्वामी जय...
जप तप तीर्थ संयम, दान विधि दीन्हे, स्वामी दान बहुत दीन्हे,
गुरु बिन ज्ञान न होवे, दाता बिन ज्ञान न होवे, कोटि यत्न कीन्हे।स्वामी जय...
माया मोह नदी जल, जीव बहे सारे, स्वामी जीव बहे सारे,
नाम जहाज बिठाकर, शब्द जहाज चढ़ाकर, गुरु पल में तारे।स्वामी जय...
काम क्रोध, मद, लोभ, चोर बड़े भारी, स्वामी चोर बहुत भारी,
ज्ञान खड्‌ग दे कर में, शब्द खड्‌ग देकर में, गुरु सब संहारे।स्वामी जय...
नाना पंथ जगत में निज-निज गुण गावें, स्वामी न्यारे-न्यारे यश गावें,
सब का सार बताकर, सब का भेद लखा कर, गुरु मार्ग लावें।स्वामी जय...
गुरु चरणामृत निर्मल, सब पातक हारी, स्वामी सब दोषक हारी,
वचन सुनत तम नासे, शब्द सुनत भ्रम नासे, सब संशय टारी।स्वामी जय...
तन, मन, धन सब अर्पण, गुरु चरणन कीजै, स्वामी दाता अर्पण कीजै,
सद्‌गुरु देव परमपद, सद्‌गुरु देव अचलपद, मोक्ष गती लीजै।स्वामी जय...
जय सद्‌गुरु देवा....

आरती

आरति करहुँ संत सद्गुरु की, सद्गुरु सत्यनाम दिनकर की।

काम, क्रोध मद, लोभ नसावन, मोह रहित करि सुरसरि पावन।

हरहिं पाप कलिमल की, आरति करहुँ संत सद्गुरु की॥ सद्गुरु...

तुम पारस संगति पारस तब, कलिमल ग्रसित लौह प्राणी भव।

कंचन करहिं सुधर की, आरति करहुँ संत सद्गुरु की॥ सद्गुरु...

भुलेहुँ जो जिव संगति आवें, कर्म भर्म तेहि बाँधि न पावें।

भय न रहे यम घर की, आरति करहुँ संत सद्गुरु की॥ सद्गुरु...

योग अग्नि प्रगटहि तिनके घट, गगन चढ़े श्रुति खुले वज्रपट।

दर्शन हों हरिहर की, आरति करहुँ संत सद्गुरु की॥ सद्गुरु...

सहस कँवल चढ़ि त्रिकुटी आवें, शून्य शिखर चढ़ि बीन बजावें।

खुले द्वार सतघर की, आरति करहुँ संत सद्गुरु की॥ सद्गुरु...

अलख अगम का दर्शन पावें, पुरुष अनामी जाय समावें।

सद्गुरु देव अमर की, आरति करहुँ संत सद्गुरु की॥ सद्गुरु...

एक आस विश्वास तुम्हारा, पड़ा द्वार मैं सब विधि हारा।

जय, जय, जय गुरुवर की, आरति करहुँ संत सद्गुरु की॥ सद्गुरु...

काल का जीव माने नहिं
कोटि कहुँ समझाय।
मैं खींचू सत्यलोक को,
वो बांदा यमपुर जाए॥